मास्टर ऑफ आर्ट्स (शिक्षाशास्त्र)

एम.ए. (शिक्षाशास्त्र)

अन्तिम वर्ष

जनसंख्या शिक्षा
Population Education

(वैकल्पिक प्रश्न पत्र)

दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत् शिक्षा केन्द्र
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय,
चित्रकूट [सतना] म.प्र. - ४८५३३४

जनसंख्या शिक्षा
Population Education
ई–संस्करण 2023–24 / M.A. Education –II - 26

प्रेरणा एवं मार्गदर्शन :
प्रो. भरत मिश्र
कुलपति
महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)

पाठ्यक्रम निर्माण

अनिल कुमार गुप्ता

पाठ्यक्रम संयोजक

डॉ. योगेश कुमार सिंह

पाठ्यक्रम अभिकल्पना एवं सम्पादक मण्डल :

डॉ. कमलेश थापक डॉ. श्याम सिंह गौर

डॉ. आशा शर्मा डॉ. नीलम चौरे

मुद्रण प्रस्तुति

डॉ. सन्तोष अरसिया, उपकुलसचिव (दूरवर्ती परीक्षा)

सन्तोष राजपूत, सहायक कुलसचिव (दूरवर्ती परीक्षा)

शिवांगी त्रिपाठी

सम्पर्क सूत्र :
डॉ. कमलेश थापक, निदेशक, दूरवर्ती शिक्षा
दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत् शिक्षा केन्द्र
महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)

दूरभाष– 07670–265460, E-mail – directordistancemgcgv@gmail.com, website : www.mgcgvchitrakoot.com

प्रकाशक :

दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत् शिक्षा केन्द्र

महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)

प्राक्कथन...

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम की तपोस्थली, मंदाकिनी नदी के सुरम्य तट पर स्थापित महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय भारतरत्न नानाजी देशमुख के शैक्षिक चिंतन और संकल्पों की जीवंत अभिव्यक्ति है, जो म.प्र.शासन द्वारा 12 फरवरी, 1991 को विशेष अधिनियम 09, 1991 द्वारा स्थापित हुआ।

विश्वविद्यालय का ध्येय वाक्य है–'विश्वं ग्रामे प्रतिष्ठितम्' अर्थात ग्राम विश्व का लघु रूप है। विश्वविद्यालय चित्रकूट में स्थित है, जो एक प्रसिद्ध तीर्थ स्थल है। नई पीढ़ी के लिये यह स्थान आदर्श एवं प्रेरणा का केन्द्र है।

विश्वविद्यालय में कृषि, प्रबंधन, अभियांत्रिकी, लोक विज्ञान, ग्रामीण विकास एवं स्थानीय स्वशासन, लोक शिक्षा, कला, संस्कृति एवं साहित्य सहित सभी अकादमिक धारायें प्रभावी रूप में उपस्थित हैं। विश्वविद्यालय, ग्राम को समाज जीवन की मूल इकाई मानकर शिक्षण, प्रशिक्षण, शोध और प्रसार कार्यों से सर्वांगीण विकास के लिए विगत 3 दशकों से अधिक समय से समर्पित प्रयास कर ग्रामोदय से राष्ट्रोदय के संकल्प में लगा हुआ है। विश्वविद्यालय ने अपनी गतिविधियों और कार्यक्रमों के माध्यम से कौशल विकास के उन्नयन एवं प्रमाणन तथा सतत विकास लक्ष्यों की प्राप्ति में महत्वपूर्ण योगदान कर रहा है तथा शासन के सहयोगी के रूप में उल्लेखनीय भूमिका का निर्वहन कर रहा है।

प्राचीन एवं सनातन भारतीय ज्ञान की परम्परा के आलोक में आई, राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 चिरवांछित जन आकांक्षाओं की सम्यक् अभिव्यक्ति है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के युगान्तरकारी प्रावधानों को लागू करने में मध्यप्रदेश अग्रणी राज्य रहा है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने नवाचारों के लिए सकारात्मक और अनुकूल वातावरण उपलब्ध कराया है। विद्यार्थियों की पठन–पाठन की स्वतंत्रता, कौशल विकास के समुचित अवसर तथा राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के अनुसार आने वाले भविष्य के लिए तैयार करने की प्रतिबद्धता राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रावधानों में स्पष्टतः दिखाई देती है।

विश्वविद्यालय ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रावधानों को दूरवर्ती के विभिन्न पाठ्यक्रमों में अर्थपूर्ण रूप से जोड़कर इन्हें सत्र 2023–24 से पुनः संशोधित/परिवर्धित रूप में प्रारम्भ किया है। विश्वविद्यालय उच्च शिक्षा के प्रसार एवं रोजगार के अवसर बढ़ाने हेतु दूरवर्ती माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में विशेष प्रयास कर रहा है। दूरवर्ती पद्धति से संचालित विभिन्न पाठ्यक्रमों में नियमित संपर्क कक्षाओं के आयोजन, उच्च शिक्षा की स्व–अध्ययन सामग्री एवं नई शैक्षिक प्रौद्योगिकी का उपयोग करते हुए शिक्षार्थी को बेहतर शैक्षणिक अनुभव प्रदान करने की व्यवस्था सुनिश्चत की जा रही है।

विश्वविद्यालय के दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत शिक्षा केन्द्र द्वारा सत्र 2024–25 में संचालित परास्नातक, स्नातक तथा डिप्लोमा स्तरीय दूरवर्ती पाठ्यक्रमों के शिक्षार्थियों हेतु ई–स्वनिर्देशित अध्ययन सामग्री प्रस्तुत करते हुये मुझे हर्ष का अनुभव हो रहा है।
पाठ्यक्रम से जुडे सभी शिक्षार्थियों, अभिभावकों, प्रशासकों, समन्वयकों और अन्य सभी को मेरी मंगलकामनायें

प्रो. भरत मिश्रा
कुलपति

जनसंख्या शिक्षा
Population Education

Unit-1: NatureAnd Scope of Population Education

Unit-2 : Population SituationAnd Dynamics

Unit-3: PopulationAnd Quality of Life

Unit-4: Family Life Education

Unit-5: Population Related PoliciesAnd Programmes

UNIT-I: NATUREAND SCOPE OF POPULATION EDUCATION

Meaning

Concept

NeedAnd Importance of Population Education

Objectives of Population Education

भूमिका

किसी देश के मानवीय संसाधन अर्थात् जनसंख्या का अध्यन अत्यंत महत्वपूर्ण है। जनसंख्या देश के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्राचीन काल में भी ज्यादा जनसंख्या से ज्यादा सैनिक उपलब्ध होंगे जो दूसरे साम्राज्य को जीतने में मदद करेंगे। आधुनिक युग में भी जनसंख्या ही श्रम, संगठन तथा उद्यम का स्रोत रहा है। श्रम की अधिकता से पूंजी का कम निवेश किया जाता रहा है। जनसंख्या ही उन उद्योगों द्वारा उत्पादित वस्तुओं की खपत का भी स्रोत रहा है। नवीन उद्योगों का उदय त उत्पादन में सुधार इसी के द्वारा सम्भव होता है। इस प्रकार राष्ट्रीय उत्पाद के निर्धारण में जनसंख्या का विशेष महत्व होता है। भारत में विश्व की 18 प्रतिशत जनसंख्या है। जबकि क्षेत्रफल की दृष्टि से विश्व के कुल क्षेत्रफल का 2.4 प्रतिशत है। इस क्षेत्र के कुल प्रतिशत परचीन एवं कश्मीर का कुछ भाग पाकिस्तान ने कब्जा कर रखा है।

जनसंख्या का धीरे–धीरे बढ़ना देश के लिए शुभ संकेत हैं, लेकिन यह दर काफी बढ़ जाती है तो यह देश के लिए काफी विकट समस्या बन जाती है। भारत देश के लिये यह कथन काफी सटिक बैठता है। जनसंख्या में हो रही निरन्तर वृद्धि का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि वर्ष 1930 से लेकर वर्ष 2000 के महज 70 वर्षों में विश्व की कुल जनसंख्या में तीन गुनी वृद्धि का रिकार्ड दर्ज किया गया है, भारत के सन्दर्भ में यह गति विश्व की गति से कही ज्यादा है। भारत में लगभग 1 करोड़ 60 लाख लोगों की वृद्धि प्रतिवर्ष होती है। भारत की दस वर्ष की वृद्धि दर (1991–2001) 21.13 प्रतिशत है। भारत में प्रतिवर्ष लगभग एक आस्ट्रेलिया जितनी जनसंख्या बढ़ जाती है। यह वृद्धिदेश के लिए निकट भविष्य में कितनी घातक सिद्ध होगी। इसका अन्दाजा इनकी जरूरतों को पूरा करने के लिए 1.37 लाख प्राथमिक एवं माध्यमिक विद्यालय 10 हजार हायर सैकण्ड्री स्कूल, 60 लाख प्राथमिक एवं माध्यमिक स्कूल शिक्षकोंद्व 1. 5 लाख हायर सेकेण्ड्री शिक्षकोंद्व 4100 अस्पतालों, 1550 प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र, अस्पतालों में मरीजों के लिए 2 लाख पलंग, 66 हजार डॉक्टर, 27 हजार नर्से, 22 लाख मीटरी टन अनाज, 26000 लाख मीटर कपड़ा तथा 2.60 करोड़ मकानों की आवश्यकता होगी। यह अनुमान आगे आने वाले समय में भयावाह हो सकती है। किसी भी देश की तरक्की में यह आंकड़ा रोड़ा भटकाने के ए काफी है।

हम भारत के जनसंख्या के इतिहास पर नजर डाले तो पायेंगे कि ज्यादा मृत्यु दर प्राकृतिक आपदाये. युद्ध. बाहरी आक्रमण चिकित्सा सुविधाओं का अभाव, अज्ञानता, वर्ण व्यवस्था, कृषि प्रधान समाज इत्यादि कुछ ऐसे कारण थे जिनके लिए परिवार नियोजन उचित नहीं समझा जाता था। शुरू में हो कम जनसंख्या देश के लिए अहित मानी जाती थी, परन्तु

आज के युग में यह किसी अभिशाप से कम नहीं है। जनसंख्या वृद्धि का अपना एक इतिहास रहा है। 1911 से 1921 का समय भारत में जनसंख्या घटने का है क्योंकि इस समय महामारी, प्लेग, हैजा आदि फैले जिन्होंने हजारों लोगों की जाने ली। 1931 से 1941 तक जनसंख्या लगभग स्थिर रही जबकि आगे की दशाब्दियों में वृद्धि दर ऊँची रही। 1931–41 की दशाब्दी एवं वर्ष 1950–61 की दशाब्दी में महत्वपूर्ण अन्तर है। 1947 में भारत विभाजन के कारण एक बड़ी मात्रा में लोग पाकिस्तान से भारत आए, जबकि पहले वाले जनसंख्या आंकड़ों में भारत व पाकिस्तान एक ही थे। 1961 में भारत की जनसंख्या 43 करोड़ थी जो 2001 में बढ़कर 102 करोड़ हो गयीहै। 1 मार्च 2001 के 0.00 बजे भारतीय जनसंख्या 1,027,015,247 हो गयीथी।

भारतीय जनसंख्या वृद्धि में उतार–चढाव देखे गये हैं। 1911 से 1921 तक जनसंख्या घटी है, 1931 से 1941 तक जनसंख्या स्थिर रही है और 1941 से जनसंख्या दर बढ़ने लगी थी। भारत में यह उतार–चढाव अनावश्यकनहीं बल्कि इसके पीछे भी कारण रहे है। 1918 में महामारी फैली, प्रथम व द्वितीय विश्वयुद्ध हुए, 1943 में दुर्भिक्ष पड़ाद्व 1947 में भारत विभाजन हुआ, 1962 में भारत–चीन युद्ध हुआ, 1965 एवं फिर 1971 में भारत–पाक संघर्ष हुए। भारत में जनसंख्या वृद्धि अब भी चिन्ताजनक दर से बढ़ रही है।

तालिका 1.1 भारत में जनसंख्या वृद्धि

वर्ष	जनसंख्या	दशकीय वृद्धि
1901	238396327	–
1911	252093390	5.75
1921	251321213	–0.31
1931	278977238	11.00
1941	318660580	14.22
1951	361088090	13.31
1961	439234771	21.64
1971	548159652	24.80
1981	686329097	24.66
1991	843387888	23.86
2001	1027015247	21.36

सन् 1991–2001 के दशक में भारत की जनसंख्या में 1806 लाख (18 करोड़ 6 लाख) की अप्रत्याशित वृद्धि हुई है। इस दशक के दौरान भारतीय जनसंख्या में जितनी अतिरिक्त बढोत्तरी हुई है। वह ब्राजील, जो विश्व का पाँचवा सबसे घनी आबादी वाला देश है, की अनुमानित जनसंख्या से कही अधिक है। स्वाधीनता के बाद के रूझानों से पता चलता है कि 1991–2001 की दशकीय वृद्धि कमी में आंशिक कमी आई है। वर्ष 1981–1991 के दशक में जनसंख्या वृद्धि दर जहाँ 23.86 प्रतिशत थी, वहीं 1991–2001 के दौरान यह घटकर 21.34 प्रतिशत रह गयी। इन आंकड़ों में एक बात तो स्पष्ट कि जनसंख्या खतरनाक तरीके से आगे बढ़ रही है। इस समय भारत जनसंख्या के मामले में चीन सेपीछे दूसरे स्थान पर है। चीन ने जहाँ अपनी जनसंख्या वृद्धि दर पर काबू पा लिया है वहीं

भारत इसमें प्रयासरत है। अगर जनसंख्या पर काबू नहीं पाया गया तो आने वाले कुछ ही वर्षों में हम चीन को पीछे छोड़ते हुए विश्व का जनसंख्या के मामले में प्रतिनिधित्व करेंगे।

शिक्षा की प्रकृति, अर्थ एवं परिभाषा

जनसंख्या जनसंख्या शिक्षा का प्रकृति विज्ञान है अथवा कला है यह एक विवाद का विषय रहा है। जनसंख्या से जुड़ी समस्त विषय के पीछे कुछ कारण है और इन कारणों के पीछे अपना एक ठोस वजह है जैसे जनसंख्या का आधार एवं वृद्धि दर, लिंगमूलक रचना, जनसंख्या का घनत्व, सम्भावित आयु इन सभी का अध्ययन विज्ञान के द्वारा ही सम्भव है। जनसंख्या सम्बंधी सभी समस्याओं का विज्ञान के द्वारा ही सम्भव है। जनसंख्या शिक्षा से अभिप्राय परिवारद्ध समाज, देश संसार में जनसंख्या की स्थिति, उनका जीवन स्तर, उनकी सोच, आयु संरचना, दृष्टिकोण इत्यादि का अध्ययन करना है। यह सब विज्ञान द्वारा ही सम्भव है।

जनसंख्या शिक्षा में जनसंख्या से जुड़ी समस्याओं को नजर अंदाज नहीं किया जा सकता है। यह समस्या आगे चलकर विकराल स्वरूप ग्रहण करे इसका समय रहते ही समाधान करना उचित है। संकचित अर्थ में हम लोग जनसंख्या शिक्षा से तात्पर्य जनसंख्या वृद्धि या विस्फोट, संयुक्त परिवारद्व परिवार नियोजन, जनसंख्या का असमान वितरण से लगाया जाता है। जनसंख्या शिक्षा में हमें देश के लोगों का सामाजिक आर्थिक तथा सांस्कृतिक नैतिक उत्थान से है। जनसंख्या नीतियाँ और कार्यक्रम राष्ट्र के विकास से जुड़ा होना आवश्यक है जिससे हमारा देश विकास की ओर अग्रसर हो सके, हमारा देश विकासशील से विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में आ खड़ा हो। जनसंख्या शिक्षा के कार्यक्रमों की रूपरेखा इस प्रकार बनाई जाये जिससे देश को स्वास्थ्य, शिक्षा, लिंग रचनाद्व जनसंख्या का असमान वितरण सम्बंधी समस्यों से निजात दिलाया जा सके। हमारे देश की जनसंख्या का गुणात्मक विकास होना चाहिए, जिससे भारत सही मायनों में विश्व का शहशांह बन सके।

जनसंख्या शिक्षा का अर्थ इसके शब्द में ही छुपा हुआ है इसका संधि विच्छेद कर आसानी से समझा जा सकता है। इसमें मुख्यता तीन शब्दों का योग है जिसका अर्थ है–जन + संख्या + शिक्षा = जनसंख्या शिक्षा।

इसके अर्थ से यह जनसंख्या शिक्षा मानवीय शक्ति अथवा मानवीय संसाधन का सदूपयोग इसके आकार, लिंग अनुपातद्व जीवन स्तर, परिवार, रोजगार,संरचना, घनत्व, वृद्धि दर, एवं इससे भीं कही के ज्यादा अध्ययन है। जनसंख्या का क्षेत्र काफी विस्तृत है इनकी अपनी समस्यायें एवं उसका अपना एक वैज्ञानिक हल है इसलिए इसकी सम्पूर्ण विविधताओं को समेट एक परिभाषा में समेटना काफी जटिल काम है। इसके बाढ़ भी कई शिक्षाविवदों, संस्थाओं गोष्ठियों में इसकी परिभाषा को भिन्न–भिन्न तरीकों से परिभाषित कर इसको स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

''जनसंख्या शिक्षा एक शैक्षिक कार्यक्रम है जो परिवारद्व समूह, राष्ट्र तथा विश्व की जनसंख्या स्थिति के सन्दर्भ में विद्यार्थियों में आदर्श एवं जिम्मेदारी पूर्ण अभिवृत्ति तथा व्यवहार विकसित करती है।'' –यूनेस्को.

''जनसंख्या शिक्षा ऐसे विश्वसनीय ज्ञान की विधियों का शिक्षण तथा सीखना हैं जो जनसंख्या के स्वरूप तथा जनसंख्या परिवर्तन के मानवीय परिणामों की खोज करती है।'' –मसीआल्स.

इन सभी उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि जनसंख्या शिक्षा में कई तत्व शामिल है जिसका अध्ययन इसमें किया जाना है। यह तत्व निम्नलिखित हैं–

1. यह जनसंख्या से सम्बन्धित एवं शैक्षिक योजना है।

2. यह जनसंख्या की समस्याओं का अध्ययन है।

3. यह जनसंख्या की समस्याओं का वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित हल है।

4. यह जनसंख्या और उसका पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन है।

5. यह जनसंख्या का आर्थिक स्तर को उठाने में मदद हेतु अध्ययन करता है।

6. जनसंख्या शिक्षा विश्व की समस्त देश के मध्य जागरुकता लाने एवं इनकी समस्या का मिलकर अध्ययन करने की प्रेरणा प्रदान करता है।

अन्ततः जनसंख्या शिक्षा का अर्थ बोधद्व कर्त्तव्यनिष्ठा, अर्थ बोधद्व कर्त्तव्यनिष्ठा, जिम्मेदारी को जगाने एवं इसको परिष्कृत करने एवं समयानुसार विचार प्रदान करने की शिक्षा है।

जनसंख्या शिक्षा के क्षेत्र

जनसंख्या शिक्षा का क्षेत्र अपनी सीमाओं में बांधना काफी कठिन है। जनसंख्या शिक्षा . समस्याओं की तरह काफी विशाल है। इसे अन्य विषयों में भी दखल रखता है। जनसंख्या शिक्षा भूगोल, इतिहास, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, समाजशास्त्र, गणित, विज्ञान, स्वास्थ्य विज्ञान, जीव विज्ञान, अ जनांकिकी एवं भाषा से . काफी घनिष्ट सम्बंध रखता है। इन सभी विषयों का अध्ययन जनसंख्या शिक्षा के सन्दर्भ में भी की जा सकती है। जनसंख्या के प्रभाव को नष्ट या कम करने के लिए हमें कई विषयों से मदद लेनी पड़ेगी। साथ ही साथ जनसंख्या शिक्षा का क्षेत्र पड़ोस, समाज से प्रारम्भ होकर जिला, प्रादेशिक, राष्ट्रीय तथा विश्व स्तर तक माना जाता है। अब जनसंख्या शिक्षा का क्षेत्र राष्ट्रीय ना होकर अन्तर्राष्ट्रीय हो गया है। समस्या किसी समाज, परिवार, राज्य, राष्ट्र की नहीं बल्कि सम्पूर्ण विश्व की है।

जनसंख्या शिक्षा को विद्यालय के प्राथमिकद्व माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक में भी बाँटा जा सकता है। सभी के पाठ्यवस्तु एवं क्षेत्र अलग–अलग हो सकते हैं। जनसंख्या शिक्षा के क्षेत्र को सुविधा की दृष्टि से निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जा सकता है–

1. जनसंख्या एवं जनसंख्या वृद्धि दर।

2. आर्थिक विकास एवं जनसंख्या शिक्षा।

3. लिंग भेद एवं जनसंख्या शिक्षा।

4. सामाजिक मान्यताएँ एवं जनसंख्या शिक्षा।

5. मानवीय भूगोल एवं जनसंख्या शिक्षा।

6. जैविक तत्व एवं जनसंख्या शिक्षा।

7. अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध एवं जनसंख्या शिक्षा।

उक्त क्षेत्रों को ध्यान में रखकर माध्यमिक स्तर तक जनसंख्या शिक्षा की पाठ्यवस्तु तैयार किये जा सकते हैं।

जनसंख्या शिक्षा की आवश्यकता

आज हमारे देश की जनसंख्या लगभग 115 करोड़ की है। पूरे विश्व की जनसंख्या लगभग 7 अरब है और लगभग 900 लाख व्यक्ति प्रतिवर्ष इसमें बढ़ रहे हैं। इतिहास को अगर पलट कर देखे तो पायेंगे कि पहले किसी भी साम्राज्य का आधार जनसंख्या ही हुआ करती थी, जितनी ज्यादा जनसंख्या उतने ही ज्यादा सैनिक एवं योद्धा। यही सैनिक एवं योद्धा द्वारा युद्ध द्वारा दूसरे देश पर आक्रमण करके खूब पैसा, सोना, चाँदी, जानवर इत्यादि लूटकर आते थे। पहले भी जनसंख्या वृद्धि अधिक थी, परन्तु उस समय चिकित्सा, स्वास्थ्य शिक्षा, के अभाव के कारण मृत्युदर अधिक हुआ करती थी। हैजाद्व फ्लेग, इत्यादि बीमारियों के कारण पूरा का पूरा गाँव का ही सफाया हो जाता था। इसे जनसंख्या में संतुलन बनता गया और जनसंख्या कमी देश के लिए समस्या नहीं रही। वीसवीं सदी में भारत की जनसंख्या वृद्धि दर में काफी उतार–चढ़ाव देखने को मिलते हैं। कभी जनसंख्या दर स्थित थी तो कभी स्थिरता के साथ क्रमिक वृद्धि देखी गई तो कभी तेजी से वृद्धि भी देखी गई। भारत की जनसंख्या वृद्धि को चार प्रमुख चरणों में बांटा जा सकता है–

1901–21 : स्थिर जनसंख्या

1921–51 : क्रमिक वृद्धि

1951–81 : तेजी से वृद्धि

1981–01 : निश्चित कमी के लक्षण के साथ ऊंची वृद्धि।

सन् 1901 से 1921 का समय भारत में जनसंख्या स्थिरता के साथ–साथ घटने का भी रहा है। इस समय के दौरान महामारी, प्लेग, हैजा आदि फैले जिन्होंने लाखों लोगों की जाने ले ली। 1921 से 1951 तक जनसंख्या बढोत्तरी का समय प्रारम्भ होता है। इस समय के दौरान जनसंख्या लगभग स्थिर रही। साथ ही साथ क्रमिक वृद्धि दर भी देखने को भी मिलती थी। 1951 से 1981 के दौरान कई महामारी पर रोक, शिशु मृत्युदर में कमी, चिकित्सा सुविधाओं का विस्तान कुछ ऐसे कारण रहे, जिससे जनसंख्या वृद्धि दर में तेजी देखी गयी। 1981 से 2001 के दौरान शिक्षा का दायरा विस्तृत, गर्भ निरोध सामग्री की सहज उपलब्धता, छोटा परिवार, शहरों का विकास कुछ ऐसे कारण रहे हैं जिससे इस दौरान जनसंख्या में निश्चित कमी के लक्षण के साधी ऊँची वृद्धि दर देखने को मिलती है।

स्वाधीनता के बाद के रूझानों से पता चलता है कि 1991–2001 की दशकीय वृद्धि में आंशिक कमी आई है। वर्ष 1981–91 के दशक में जनसंख्या वृद्धि दर जहाँ 23.86 प्रतिशत थी, वहीं 1991–2001 के दौरान यह घटकर 21.34 प्रतिशत रहा गयी। आलोच्य अवधि में जनसंख्या की घाताकी बढोत्तरी 2.14 प्रतिशत से घटकर 1.93 प्रतिशत प्रतिवर्ष हो गयी है। जहाँ तक 1991–2001 की अवधि में घांटाकी खाद्यान्न उत्पादन का सवाल है, तो वह भी 1.9 प्रतिशत वृद्धि के साथ जनसांख्यिकीय बढोत्तरी से तालमेल रखता दिखाई देता है।

वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार भारत का जनसंख्या घनत्व 324 व्यक्ति प्रतिवर्ष किलोमीटर है। भारत एक विशाल भूखण्ड है जिनमें प्रान्तीय आधारपर जनसंख्या सम्बंधी अनेक विषमतायें देखने को मिलती हैं। क्षेत्रफल की दृष्टि से राजस्थान सबसे बड़ा राज्य है, परन्तु जनसंख्या की दृष्टि से उत्तर प्रदेश। सन् 2001 में केरल में जनघनत्व 819, बंगाल में 903द्व नागालैण्ड में 103, राजस्थान में 165 और अरुणंचल प्रदेश में केवल 13 था। केन्द्र शासित प्रदेशों दिल्ली 9340 और चण्डीगढ़ 7900 में जनघनत्व अधिक था।

जनसंख्या के घनत्व को प्रभावित करने में जलवायु, वर्षा की मात्रा, भूमि की परत एवं बनावट तथा सुरक्षा के साधन, आदि महत्वपूर्ण कारक है। 2001 की जनगणना के अनुसार भारत में प्रति 1000 पुरुषों पर स्त्रियों की संख्या 933 है, 72.2 प्रतिशत जनसंख्या गाँवों तथा 27.8 प्रतिशत जनसंख्या नगरों में निवास करती है, देश में साक्षरता का प्रतिशत 64.8 है, पुरुषों में साक्षरता का प्रतिशत 75.2 प्रतिशत है तथा स्त्रियों में 53.6 प्रतिशत है। जनसंख्या वृद्धि दर, जनसंख्या विस्फोट, लिंग असमानता, जनसंख्या घनत्व, बेरोजगारी, साक्षरता दर, अन्ध विश्वास, भाग्यवाद कुछ ऐसे कारण रहे हैं जिनके लिए वर्तमान युग में जनसंख्या शिक्षा की आवश्यकता बढ़ गई है। जनसंख्या शिक्षा अग्रलिखित कारणों से आवश्यक है–

1. जीवन स्तर एवं गुणवत्ता बढ़ाने के लिए।

2. लिंग–भेद को कम करने के लिए।

3. साक्षरता दर बढ़ाने हेतु।

4. बेरोजगारी मिटाने हेतु।

5. उचित आवास की व्यवस्था हेतु।

6. भौतिक साधनों तथा जनसंख्या के मध्य असंतुलन कम करने के लिए।

7. जनसंख्या घनत्व को कम करने।

8. विकास की असमानता को दूर करने हेतु।

9. प्रचलित कुप्रथाओं एंव मान्यताओं को कम करने के लिए।

10. जनसंख्या विस्फोट को नियंत्रित करने के लिए।

11. पारिवारिक विघटन को समाप्त करने के लिए।

जनसंख्या शिक्षा का महत्व

विश्व की जनसंख्या जैसे–जैसे बढ़ती गई वैसे ही पूरे विश्व का ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ। जनसंख्या विस्फोट के प्रभाव को कम करने के लिए प्राथमिक स्तर से ही जनसंख्या शिक्षा की आवश्यकता एवं जरूरत महसूस होने लगी। चीन एवं भारत जनसंख्या वृद्धि के दुष्प्रभावों से सबसे ज्यादा प्रभावित होने वाला देश होने जा रहा था।

विश्व समुदाय ने सन् 1974 वर्ष को जनसंख्या शिक्षा का वर्ष बनाया। इस उपलक्ष्य में बुखारेस्ट में 16 से 30 अगस्त तक जनसंख्या शिक्षा संगोष्ठी का आयोजन किया गया। इस संगोष्ठी में भाग लेने के लिए विश्व के कई देशों के 3500 प्रतिनिधियों नेद्र जिसे ष्पापुलेशन ट्रिब्यूनष के नाम से जाना जाता है, बुखारेस्ट में इकट्ठे हुये। जनसंख्या शिक्षा के महत्व को स्वीकार करते हुए एक घोपाणा की, जिसके तथ्य निम्न थे–

1. उन्नति की प्रेरणा प्रदान करने में शिक्षा का सर्वोपरि स्थान है तथा उसके द्वारा युवक युवतियाँ एवं अन्य गणमान्य नागरिक अपनी उन्नति के लिए संकल्पित होने की प्रेरणा प्राप्त करते हैं।

2. शिक्षा का चरम उद्देश्य राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय उन्नति के लिए भावी नागरिकों के ज्ञान, कौशल, योग्यताओं एवं अभिवृत्तियों का सम्पूर्ण मानवीय साधनों का विकास करना है जिससे अन्तर्राष्ट्रीय भाईचारा बना रहे।

3. प्रत्येक राष्ट्र की सम्पूर्ण जनसंख्या के लिए आहार, आवास, स्वास्थ्य, रोजगार, शिक्षा के अवसर, उच्च जीवन स्तर एवं सुखी पारिवारिक जीवन की समस्याओं के हल प्राप्ति से सम्ब, होने के कारण जनसंख्या शिक्षा समूची शिक्षा व्यवस्था को वास्तविक एवं सार्थक बनाती है।

4. जनसंख्या शिक्षा का अत्यंत विशुद्ध शैक्षिक आधार है। प्रत्येक राष्ट्र की जनसंख्या की विशिष्टताएँ तथा उसमें हो रहे परिवर्तन का सीधा सम्बंध प्रत्येक नागरिक के सम्पूर्ण जीवन से है चाहे राष्ट्र की आबादी घनी हो या कम अथवा राष्ट्र विकसित हो या विकासोन्मुखी।

जनसंख्या शिक्षा के उद्देश्य

आज हम अगर विश्व के प्रमुख समस्याओं पर नजर डाले तो निःसंदेह उन समस्याओं में से एक समस्या जनसंख्या वृद्धि एक इस विषय से सम्बन्धित जरूर होगी। आज भी आम नागरिक जनसंख्या शिक्षा को परिवार नियोजन, छोटा परिवार और यौन शिक्षा से सम्बन्धित ही मानता है। जनसंख्या शिक्षा आज के वर्तमान युग में कई समस्याओं के निदान में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है तो फिर इसका संकुचित उद्देश्य का निर्धारण क्यों किया जाता है। जनसंख्या शिक्षाजीवन को सुखी बनाने, परिवार के सदस्यों ने अपनी विश्वास बढ़ानेद्व जीवन मूल उन्नत बनाने, देश के विकास में योगदान देने, अन्तर्राष्ट्रीय समस्यों को हल करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। इस दृष्टि से जनसंख्या शिक्षा के निम्न उद्देश्य हैं–

1. जनसंख्या शिक्षा का उद्देश्य जनसंख्या में संतुलन स्थापित करना, जनसंख्या वृद्धि के दुष्परिणाम बताते हुए इस पर रोक लगाना।

2. आज के आधुनिक युग में छोटे परिवार की महत्ता बताते हुए हम दो हमारे दो का नारा बुलन्द करना।

3. जनसंख्या के लिए स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास, भोजन तथा जीवन की अन्य सुविधाओं को जुटाने के लिए प्रयत्नशीलता को बढ़ावा देना।

4. तीव्र जनसंख्या वृद्धि के नुकसान को बताते हुए इस पर नियंत्रण के तरीको को बताना।

5. सरकार द्वारा चलाए जाने वाले परिवार नियोजन कार्यक्रम का प्रचार–प्रसार करना।

6. जनसंख्या वृद्धि में माँ एवं उनके बच्चों पर पड़ने वाले कुप्रभावों से सबको परिचित कराना।

7. जनसंख्या वृद्धि का पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

8.जनसंख्या वृद्धि का मानव जीवन एवं जीवन स्तर तथा पोषण पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करता है।

9. जनसंख्या वृद्धि का देश के आर्थिक विकास एवं रोजगार के अवसरों पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करता है।

भूमिका

सारांश

भारत की वर्तमान जनसंख्या एक अरब से ज्यादा है। भारत में लगभग 1 करोड़ 60 लाख लोगों को वृद्धि प्रतिवर्ष होती है। भारत की दस वर्ष की वृद्धि दर (1991–2001) 21.13 प्रतिशत है। भारत में प्रतिवर्ष लगभग एक आस्ट्रेलियाजितनी जनसंख्या बढ़ जाती है।

इस बढ़ी जनसंख्या को1.37 लाख माध्यमिक एवं प्राथमिक शिक्षकों, 4100 अस्पतालों, 1150 प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र, मरीज हेतु 2 लाख पलंग, 55 हजार डॉक्टर, 27 हजार नर्सो, 22 लाख मीटरी टन अनाज, 26000 लाख मीटर कपड़ा तथा 2.60 करोड़ मकानों कीआवश्यकता होगी।

जनसंख्या शिक्षा की प्रकृति, अर्थ एवं परिभाषा

जनसंख्या शिक्षा का प्रकृति विज्ञान है। जनसंख्या शिक्षा में जनसंख्या से जुड़ी समस्याओं को नजर अंदाज नहीं किया जा सकता, बल्कि उसका वैज्ञानिक हल करना है। यूनेस्कों के अनुसार– ष्जनसंख्या शिक्षा एक शैक्षिक कार्यक्रम है जो परिवार, समूह, राष्ट्र तथा विश्व की जनसंख्या स्थिति के सन्दर्भ में विद्यार्थियों में आदर्शों एवं जिम्मेदारी पूर्ण अभिवृत्ति तथा व्यवहार विकसित करती है।

जनसंख्या शिक्षा के क्षेत्र

1. जनसंख्या एवं जनसंख्या वृद्धि दर

2. आर्थिक विकास एवं जनसंख्या शिक्षा।

3. लिंग भेद एवं जनसंख्या शिक्षा।

4. स्वास्थ्य एवं जनसंख्या शिक्षा।

5. सामाजिक मान्यताएं एवं जनसंख्या शिक्षा।

6. मानवीय भूगोल एवं जनसंख्या शिक्षा।

7. जैविक तत्व एवं जनसंख्या शिक्षा।

8. अन्तर्राष्ट्रीय सम्बंध एवं जनसंख्या शिक्षा।

जनसंख्या शिक्षा की आवश्यकता

1. जीवन स्तर एवं गुणवत्ता बढ़ाने हेतु।

2. लिंग भेद को कम करने के लिए।

3. साक्षरता दर बढ़ाने हेतु।

4. बेरोजगारी मिटाने हेतु।

5. उचित आवास की व्यवस्था हेतु।

6. जनसंख्या घनत्व को कम करने।

7. विकास की असमानता को दूर करने।

8. कुप्रथाओं एवं मान्यताओं को कम करने केलिए।

9. जनसंख्या विस्फोट को नियंत्रित करने के लिए।

10. पारिवारिक विघटन को समाप्त करने के लिए।

जनसंख्या शिक्षा का महत्व

1. उन्नति की प्रेरणा प्रदान करने के सहायक।

2. राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय उन्नति के लिए नागरिकों मेंकौशल, योग्यताओं एवं अभिवृत्तियों का विकास।

3. प्रत्येक देश की जनसंख्या हेतु आहार, आवास, रोजगार, स्वास्थ्य की समस्याओं को हल करना।

अभ्यास प्रश्न

1. जनसंख्या शिक्षा का महत्व बताते हुए इनकी विशेषताओं एवं लाभों को स्पष्ट करें।
2. जनसंख्या क्या है? इसके क्षेत्र तथा आवश्यकता पर प्रकाश डालें?
3.जनसंख्या शिक्षा को परिभाषित करते हुए उसकी आवश्यकता बताइये।

UNIT-II: POPULATION SITUATIONAND DYNAMICS

- DistributionAnd density
- Population composition -Age, Sex, Rural/Urban
- WorldAnd Indian factorsAfecting population growth
- MortalityAnd Other Implication

जनसंख्या गतिकी

जनांकिकी पृष्ठभूमि

जनसंख्या सम्बंधी आंकड़ों को इकट्ठा करने का इतिहास काफी पुराना है। प्राचीनकाल से ही जनसंख्या की गिनती किया जाता रहा है। अधिक जनसंख्या सदैव किसी भी राज्य के लिए समृद्धि का द्योतक रहा है। सैन्य सम्बंधी कारण, कर सम्बंधी, कारणों से प्राचीनकाल में भी जनसंख्या की गिनती करवाई जाती थी। प्राचीनकाल में जनसंख्या गणना सिर्फ आधार, वितरण और संयोजन के सम्बंध में अध्ययन करता आया है, परन्तु आज के आधुनिक युग में जनसंख्या के अध्ययन में आनुमानिक, सांख्यिकीय तथा गणितीय पहलुओं का समावेश हो गया है। इसके परिणाम स्वरूप जनसंख्या सम्बंधी अध्ययन का विस्तार हो गया और यह किसी देश के लिए ही नहीं वल्कि सम्पूर्ण विश्व के लिए उपयोगी और सार्थक सिद्ध हुआ। अब इसके अध्ययन के विशालता को देखते हुए इसे जनांकिकी के नाम से जानते हुए इसके अंतर्गत जनसंख्या एवं इसके अन्य पहलुओं का अध्ययन किया जाने लगा।

सर्वप्रथम 'जनांकिकी' शब्द का उपयोग गुडलार्ड (Guillord) महोदय ने सन् 1865 में अपने पुस्तक Elements de statique Humane on Demographic Comparee में किया है। जनसंख्या अध्ययन के पिछले इतिहास पर नजर डाले तो पायेंगे कि जनांकिकी का व्यवस्थित अध्ययन सन् 1660 से शुरू हुआ है। जनांकिकी के अन्तर्गत जनसंख्या शिक्षा के निम्न पहलुओं एवं अवधारणाओं का अध्ययन किया जाता है–

1.जनसंख्या का आकार

2. जनसंख्या का वितरण

3. जनसंख्या का गठन

4. जनसंख्या में परिवर्तन के पहलू

हम जनांकिकी के विषयवस्तु पर अध्ययन एवं विचार करे तो इसमें प्रजनन, मृत्यु, विवाह, देशान्तर और सामाजिक, गतिशीलता इन पाँच प्रक्रियाओं के आधार पर विश्लेषण किया जाता है। यह प्रक्रियाएँ जनसंख्या गठन, आकार एवं वितरण को प्रभावित करती है।

जनांकिकी की अर्थ एवं परिभाषा

जनांकिकी के अर्थ को लेकर काफी मतभेद है। मतभेद का मुख्य कारण इसकी अलग–अलग क्षेत्र द्वारा कि गई विविध व्याख्या है। सार्वजनिक स्वास्थ्य से सम्बन्धित व्यक्ति

जनांकिकी का अर्थ जन्मदर, मृत्यु दर तथा स्वास्थ्य सम्बन्धित जानकारी के अध्ययन से लगता है। वही सामाजिक प्रक्रियाओं से सम्बन्धित व्यक्ति जनांकिकी की व्याख्या पारिवारिक एवं सामाजिक संरचना, जन्म और मृत्यु दर, विवाह आदि से करता है। आर्थिक प्रक्रियाओं में रुचि लेने वाले व्यक्ति विकासके अर्थशास्त्र को जनांकिकी मानते हैं। जनांकिकी के अर्थ को लेकर विभिन्न विद्वानों में मतभेद रहा है और यही कारण है कि इसकी परिभाषा में भी इनमें सदैव मतभेद रहा है। जनांकिकी की परिभाषा को अध्ययन की दृष्टिकोण से संकुचित विचारधारा एवं व्यापक विचारधारा में बांटा गया है। संकुचित विचारधारा वाले विद्वानों में मुख्यता हाउसरन, डंकन, हिवपिल, तथा थामँसन प्रमुख हैं। इनके अनुसार जनांकिकी जनसंख्या के आकार वितरण और संयोजन का अध्ययन है। वहीं दूसरी ओर जनांकिकी के प्रति व्यापक दृष्टिकोण रखने वाले विद्वानों में वर्कले, फैक, बोग और मूर प्रमुख हैं। इन सभी विद्वानों के अनुसार जनांकिकी जनसंख्या की आर्थिक, सामाजिक, भौगोलिक तथा जैविकीय स्थिति का अध्ययन किया जाता है। इस व्यापक विचारधारा में वैज्ञानिक दृ ष्टिकोण का अभाव पाया जाता है इसकी भरपाई वैज्ञानिक विचारधारा के विद्वानों द्वारा पूरी की गई।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण के समर्थक विद्वानों द्वारा दी गयी जनांकिकी की परिभाषा निम्न है–

''जनसंख्या के आकार, प्रादेशिक वितरण, गठन एवं उसमें होने वाले परिवर्तन और इन परिवर्तनों के भाग जो जन्म और मृत्यु दर, प्रादेशिक देशान्तर तथा सामाजिक गतिशीलता के रूप में जाने जाते हैं, जनांकिकी है।'' –हाऊजर एवं डंकन

''जनांकिकी व्यक्तियों के व्यवहार का अध्ययन ही नहीं करती है अपितु व्यक्तियों के योग या उसके किसी भाग का अध्ययन करती है। मानवीय जनसंख्या का संख्या के आधार पर चित्रण जनांकिकी के नाम से जाना जाता है।'' –डब्ल्यू. जी. बर्कले

''जनांकिकी मानव जनसंख्या के आधार गठन और स्थानिक वितरण एवं उसमें प्रजनन, मृत्यु, विवाह, देशान्तर एवं सामाजिक गतिशीलता की पाँच प्रक्रियाओं द्वारा समय–समय पर होने वाले परिवर्तनों का सांख्यिकीय एवं गणितीय अध्ययन है। हालांकि यह इनमें से प्रत्येक और उसके परिणाम में वर्णनात्मक एवं तुलनात्मक प्रवृत्ति तो बनाये रखती है, फिर भी इन प्रक्रियाओं और उनके वास्तविक परिणामों में इसका दीर्घकालीन उद्देश्य घटित घटनाओं की व्याख्या हेतु सिद्धांतों का विकास करना है।'' – डोनाल्ड बोग

इन उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि जनांकिकी जनसंख्या के आकार, गठन, वितरण एवं परिवर्तन का अध्ययन है। आधुनिक यु में विश्लेषण की बहुत ही उन्नत तकनीकी विकसित हुई है। जनांकिकी वस्तुतः जनसंख्या का गणितीय अध्ययन करने वाली वह शाखा है जो केवल जनसंख्या के गणितीय अध्ययन करने वाली वह शाखा है जो केवल जनसंख्या के गणितीय अध्ययन तक ही सीमित नहीं वरन् उसमें हो रही गति एवं परितर्वनों का भी अध्ययन करती है।

जनांकिकी का क्षेत्र

भी जनांकिकी के क्षेत्र को भी लेकर विभिन्न विद्वानों में मतभेद है। यह संकुचित और व्यापक दृष्टिकोणों में विभाजित है। हाउजर, डंकन आइरीन और टेवर इत्यादि विद्वानों ने

जनांकिकी के क्षेत्र की व्याख्या संकुचित दृष्टिकोण से की है। इनके अनुसार प्रत्येक विज्ञान का सम्बंध जनांकिकी से आवश्यक है परन्तु केवल सीमित दायरे तका उदाहरणार्थ जनांकिकी में नगरीकरण का अध्ययन तो किया जाता है, परन्तु इसकी विशेषताएँ जैसे नगरों में यातायातद्व संचार, बैंकिंग, आवास, मनोरंजन, उद्योग आदि का अध्ययन इसके अन्तर्गत नहीं किया जाता है। कुछ विद्वानों जैसे थॉमसन, लेविस आदि का विचार है कि जनांकिकी का क्षेत्र बहुत अधिक विस्तृत ना करके इसे सीमित दायरे में बाँधना चाहिये। इसके अन्तर्गत जनसंख्या का आकार, गठन वितरण एवं परिवर्तन का अध्ययन करना ही उपयुक्त होगा।

संकुचित दृष्टिकोण के विपरीत, व्यापक दृष्टिकोण के विद्वानों वान्स, स्पेगलर, मूर आदि विद्वानों का मत है कि जनांकिकी के अन्तर्गत सभी विज्ञानों की कोई न कोई बातों का अध्ययन किया जाता है। इसमें जनसंख्या भी उच्च और निम्न दर– कारण, प्रवृत्तियाँ, स्त्री–पुरुष अनुपात, आयु संरचना, स्वास्थ्य स्थिति आदि अनेक बातों का सम्बंध प्रजनन शास्त्र से है तो वहीं जनसंख्या के स्थानीय वितरण तथा उसके कारकों का सम्बंध भूगोल से है। समाजशास्त्र के अन्तर्गत वैवाहिक स्थिति, पारिवारिक संरचना, जाति, धर्म, प्रवास आदि से है तो वही जनसंख्या की आयु, विनियोजन तथा उत्पादकता जीवन–स्तर, रोजगार, श्रम पूँजी आदि का अनुपात, बचत गतिशीलता आदि का सम्बंध अर्थशास्त्र से है। इस तरह कई विषयों, विज्ञानों एवं शास्त्रों का जनांकिकी से सम्बन्धित है।

जनांकिकी की विषय वस्तु

जनांकिकी जनसंख्या से सम्बन्धित आंकड़ों के एकत्रीकरण एवं उसकेविश्लेषण से जुड़ा हुआ है। जनांकिकी की विषय–सामग्री में जनसंख्या का आकार, गठन, वितरण एवं परिवर्तन तत्वों के अन्तर्गत ही जनसंख्या का सम्पूर्ण अध्ययन समाहित है।

1. जनसंख्या का आकार : जनसंख्या के आकार के अन्तर्गत किसी क्षेत्र के निवासियों को संख्या से लगाया जाता है। इसमें जनसंख्या के आकार के इतिहास, वर्तमान स्थिति तथा भविष्य में जनसंख्या के अनुमान लगाना, इसका अध्ययन करना एवं इसका तुलनात्मक अध्ययन करना इसकी विषय–वस्तु है।

2. जनसंख्या की संरचना एवं बनावट :यह जनांकिकी का दूसरा सबसे महत्वपूर्ण अध्ययन क्षेत्र है। इसके अन्तर्गत एक स्थान विशेष की जनसंख्या की समस्त विशेषताओं जैसे–जनसंख्या का प्रकार, शिक्षा का स्तरद्व लैंगिक अनुगत, आयु का स्तर, किसी जाति अथवा वर्ग विशेष के व्यक्तियों का अनुपात अथवा प्रतिशत आदि का अध्ययन करना है। देश की जनसंख्या नीति के निर्धारण हेतु देश की जनसंख्या की संरचना, बनावट अथवा गठन का ज्ञान आवश्यक है।

3. जनसंख्या का वितरण : जनसंख्या का वितरण के अन्तर्गत देश, विश्व अथवा उसके किसी भूखण्ड में जनसंख्या का वितरण किस प्रकार का है। जनसंख्या घनत्व का अध्ययन, इसके प्रभावक कारकों में जलवायु, वनस्पति, आर्थिक सामाजिक तत्व, प्रवास व अत्रवास आदि से है। जिनके परिणामस्वरूप अनेक समस्याएं उत्पन्न होती हैं। जैसे– बेरोजगारी, यातायात, आवासीय, पर्यावरण, नगरीय आदि से सम्बन्धित समस्या। जनसंख्या वितरण द्वारा

किसी भी जनसंख्या में गाँव व नगर में रहने वाले लोगों का प्रतिशत तथा उनके घनत्व को जाना जा सकता है।

4. जनसंख्या में परिवर्तन के पहलू : जनसंख्या में सदैव परिवर्तन का गुण विद्यमान रहा है। यहसमय विशेष से सम्बन्धित रहा है। जनसंख्या में परिवर्तन में भौगोलिक कारक, उद्योगों की स्थिति, रोजगार, शिक्षाद्व मनोरंजन, सामाजिक क्रियाकलाप. रहन–सहन के स्तर, अन्य देशों एवं शहरों से सम्बंध आदि महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। परिवर्तन आगे बढ़ने की निशानी है।

जनसंख्या वितरण एवं घनत्व

जनसंख्या घनत्व से आशय किसी देश में रहने वाले व्यक्तियों की प्रति वर्ग किलोमीटर औसत संख्या से है। किसी देश की कुल जनसंख्या को वहाँ के कुल क्षेत्रफल से भाग देकर उस देश का जनसंख्या घनत्व मालूम किया जा सकता है। पिछले दस जनगणनाओं के अनुसार जनसंख्या घनत्व निम्न तालिका में दर्शाया गया है।

तालिका 2.1 जनसंख्या घनत्व

वर्ष	जनसंख्या घनत्व (व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर)
1911	82
1921	81
1931	90
1941	103
1951	117
1961	142
1970	177
1981	221
1991	267
2001	324

1991 की जनगणना के अनुसार भारत का औसत जन घनत्व 267 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है जो 2001 जनगणना में बढ़कर 324 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर हो गया। देश का क्षेत्रफल तो लगभग स्थिर है, परन्तु जनसंख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है जिसके परिणामस्वरूप देश का औसत घनत्व में तेजी से वृद्धि हो रही है। प्रति वर्ग किलोमीटर के हिसाब से जनघनत्व 1921 में 81, 1951 में 117, 1961 में 142, 1971 में 177, 1981 में 221, 1991 में267 और 2001 में 324 था।

यद्यपि 2001 में सारे देश के लिए जनसंख्या घनत्व 324 प्रति वर्ग किलोमीटर बैठता है, परन्तु देश के विभिन्न राज्यों के जनघनत्व में भारी अन्तर है। यह दिल्ली में सर्वाधिक 6352, चढीगढ़ में 7903, पंडिचेरी में 2029, लक्षद्वीप में 1894, और दमन एवं द्वीप में 1411 है। इसके विपरीत अरुणांचल प्रदेश में 13, मिजोरम में 42, अंडमान–निकोबार में 43, सिक्किम में 76, जम्मू–कश्मीर में 99 और मेघालय में 103 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर पाया

जाता है जो कि जनसंख्या घनत्व के असमानता को दर्शाता है। मध्य प्रदेश एवं उत्तर प्रदेश यह क्रमशः196 तथा 689 है। वास्तव में जनसंख्या घनत्व में इस प्रदेश में यह वर्षा अन्तर का कारण देश के विभिन्न भागों में जलवायु, भूमि के स्वरूप, सिंचाई, सुरक्षा तथा आर्थिक विकास आदि बातों में विभिन्नता का होना है। भारत में भूमि बहुत उपजाऊ है इसलिए वहाँ जनघनत्व अपेक्षाकृत अधिक है। राजस्थान में पानी की कमी के कारण, कश्मीर और महाराष्ट्र में पहाड़ी इलाकों के कारण जनघनत्व अपेक्षाकृत कम है। औद्योगिक विकास में असमान वृद्धि के कारण भी जनघनत्व में अन्तर है। देश के जिन भागों में उद्योग तथा व्यापार का अपेक्षाकृत अधिक विकास हुआ है। वहाँ जनसंख्या का बड़ा भाग निवास कर रहा है जैसे कि दिल्ली, मुम्बई, अहमदाबाद, कानपुर आदि शहरों में जनघनत्व अधिक है। इसी प्रकार धार्मिक, ऐतिहासिक, शिक्षा, प्रशिक्षण, स्वास्थ्य सम्बंधी बातों ने भी जनघनत्व को प्रभावित किया है।

जनसंख्या घनत्व की दृष्टि से भारत का स्थान मध्यम जनघनत्व वाले देशों में आता है। यहाँ का जनघनत्व न तो हालैण्ड अथवा नीदरलैण्ड जितना अधिक है और न अमेरिका, आस्ट्रेलिया अथवा ब्राजील जितना कम। ध्यान रखने योग्य बात है कि आर्थिक बातों का जनघनत्व पर विशेष प्रभाव पड़ता है, परन्तु जनघनत्व निर्धनता तथा सम्पन्नता का सूचक नहीं है। अमरीका का जनघनत्व बहुत कम है, परन्तु यह विश्व में सर्वाधिक सम्पन्न देश है। आस्ट्रेलिया का जनघनत्व इससे भी कम हैं, परन्तु वह अमरीका जितना विकास नहीं कर सका है।

इसके विपरीत, इग्लैण्ड तथा जापान का जनघनत्व बहुत अधिक है,फिर भी यह विश्व के प्रमुख विकसित देश है। भारत में भी जनघनत्व बहुत अधिक है, परन्तु आर्थिक दृष्टि से यह पिछड़ा हुआ है। अन्य देशों जहाँ इंग्लैण्ड में 215, हालैण्ड में 348, जापान में 215, पश्चिमी जर्मनी में 217, रूस में 10 आस्ट्रेलिया में 3, अमेरिका में 20 तथा कनाड़ा में 2 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है।

जनसंख्या की संरचना एवं बनावट

किसी भी देश की जनसंख्या नीति को बनाने हेतु उस देश की जनसंख्या सम्बन्धित संरचना एवं बनावट का ज्ञान होना अति आवश्यक है। जनसंख्या की संरचना एवं बनावट का अध्ययन करने के लिए जनसंख्या का प्रकार, शिक्षा कास्तर, साक्षरता दर, लैंगिक अनुपात, आयु का स्तर, शहरी एवं ग्रामीण जनसंख्या का अनुपात, किसी जाति अथवा वर्ग विशेष के व्यक्तियो का अनुपात अथवा प्रतिशत आदि का ज्ञान जनसंख्या घनत्व, संरचना एवं बनावट से किया जा सकता है। इसके अन्तर्गत एक स्थान विशेष की जनसंख्या की समस्त विशेषताओं को मापा जा सकता है।

संरचना

आयु आयु संरचना जनसंख्या की आधारभूत विशेषताओं में से एक है। जनसंख्या की आयु संरचना के आंकड़े विभिन्न प्रकार के जनांकिकी विश्लेषण के लिए मुख्य आधार है। आयु संरचना की जनांकिकी विभिन्नताओं, आर्थिक भिन्नता एवं विकास योजनाओं में महत्वपूर्ण भूमिका है। आयु संरचना और प्रति व्यक्ति आय परस्पर सम्बन्धित है। प्रति व्यक्ति आय और जीवन स्तर, प्रजनन स्तर, मरणशीलता, स्थानांतरण, को प्रभावित करता है और इनके

माध्यम से जनसंख्या की आयु–संरचना भी प्रभावित होती है। प्रति व्यक्ति उच्च आय होने से जन्म दर व मृत्यु दर प्रायः कम होती है। दूसरी ओर प्रति व्यक्ति निम्न आय प्रायः उच्च जन्म दर का प्रतीक है और किशोर आयु समूह के वितरण, तथा शिशु मृत्यु दर को बढ़ावा देती है जिससे जनसंख्या में बच्चों का अनुपात घटता है। स्थानान्तरण जो प्रायः आयु व लिंगानुसार चयन के अनुसार होता है एवं इसका प्रभाव दोनों स्थान जहाँ से प्रवासी जाते हैं व आते हैं के आयु–लिंग संरचना पर पड़ता है। परिणामस्वरूप आयु संरचना का प्रभाव दोनों उत्पादक व उपभोक्ता पर पड़ता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि मानव शक्ति महत्वपूर्ण आर्थिक साधन है, जिसका सीधा प्रभाव आर्थिक विकास के स्तर और कार्यशील जनसंख्या पर पड़ता है, यह एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में भिन्न होती है।

किसी क्षेत्र में प्रति व्यक्ति आय वहाँ के आर्थिक विकास के स्तर परनिर्भर करती है। जिसके द्वारा वहाँ के लोगों का जीवन स्तर प्रभावित होता है तथा यह कार्यशील जनसंख्या के अनुपात में विभिन्नता से भी प्रभावित होती है। जैसा कि यह सत्य है कि विश्व के अधिकांश विकासशील देशों में निर्भर व्यक्तियों का अनुपात उच्च है और आर्थिक रूप से क्रियाशील जनसंख्या कम है। व्यक्तियों का उच्च अनुपात इन देशों में प्रति व्यक्ति कम आय के लिए उत्तरदायी है। इन परिस्थितियों के कारण ऐसे क्षेत्रों में आर्थिक विकास कठिन हो जाता है। इसका कारण तुलनात्मक रूप से आर्थिक दृष्टि से क्रियाशील जनसंख्या का कम होना और उस पर अकार्यशील जनसंख्या की आर्थिक संख्या में निर्भर होना है।

भारत एक विकासशील देश है यहाँ जन्म दर अभी भी उच्च है, जबकि मृत्यु दर धीरे–धीरे कम हो रही है। इसके परिणामस्वरूप, जीवन प्रत्याशा क्रमशरू बढ़ रही है। उच्च जन्म दर और जीवन प्रत्याशा के बढ़ने से बच्चों और वृद्धों के अनुपात में वृद्धि हो रही है। अर्थात् निर्भर व्यक्तियों का अनुपात बढ़ रहा है और आर्थिक रूप से कार्यशील जनसंख्या पर उच्च दबाव बना है। निर्भर व्यक्तियों का यह उच्च अनुपात भारत के योजनाविदों के लिए गंभीर समस्या बना हुआ है।

जनसंख्या की आयु संरचना श्रमिक शक्ति के आकार, उत्पादक आयु वर्ग के निर्भरता बोझ तथा जनसंख्या की भविष्य की प्रवृत्ति को निर्धारित करती है तथा आयु संरचना स्वयं प्रजननता तथा मरणशीलता की प्रवृत्ति तथा केवल कुछ सीमा तक प्रवास को प्रमुखतः निर्धारित करती है।

किसी भी जनांकिकी विश्लेषण में जनसंख्या की आयु संरचना का अधिक महत्व है। इसमें जनसंख्या की अनेक महत्वपूर्ण विशेषताएँ जनांकिकी अन्तराल के आधार पर प्रदान करती है तथा यह जनसंख्या वृद्धि के गत्यात्मक पक्ष के अध्ययन का प्रमुख आधार है। देश की प्रजननता के स्तर में परिवर्तन बच्चो की जनसंख्या से प्रत्यक्ष रूप से परावर्तित होती है। विशेषकर 04 आयु वर्ग मे लेकिन भारत मे आयु की शुद्ध साख्यिकी राष्ट्रीय जनगणना रिपोर्ट के संग्रह मे अनेक समस्याएँ तथा त्रुटियाँ शेष रहती है क्योकि देश की अधिकाँश जनसंख्या अशिक्षित हैं। जनगणना रिपोर्ट एवं सर्वेक्षणों में अनेक त्रुटियां रहती हैद्व विशेषकर 0–4 तथा 5–9 आयु वर्ग में।

जनसंख्या की आयु संरचना को अनेक कारक नियंत्रित करते हैं जैसे–जन्म, मृत्यु, स्थानान्तरण आदि अन्यदूसरे कारक बाद में प्रभावित करते हैं। सामान्यतः यह देखा गया है कि उच्च जन्म दर वाले देशों में नवीन वर्ग की जनसंख्या अधिक है। एशिया तथा अफ्रीका

के अधिकांश देश इस वर्ग में आते हैं। इसके विपरीत पश्चिमी देशों में जहाँ जन्म दर कम है, इसके विपरीत पश्चिमी देशों में जहाँ जन्म दर कम है, इसके विपरीत है। भारत में अधिक जन्म दर होने के कारण नवीन आयु वर्ग की जनसंख्या का अनुपात अधिक है।

भारत की जनसंख्या की लिंग–संरचना

किसी भी देश की जनसंख्या लिंग संरचना से प्रभावित होती है। लिंग–संरचना का तात्पर्य स्त्रियों और पुरुषों के पारस्परिक अनुपात से होता है। सामाजिक संरचना में पुरुष व स्त्री दो वर्ग है। इस संरचना के निर्माण में इन दोनों वर्गों की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। आर्थिक विकास में सामाजिक संरचना का अधिक महत्व होता है।

स्त्री पुरुष के मध्य इतनी अधिक संख्यात्मक असमानता की व्याख्या केवल इस तथ्य से स्पष्ट नहीं की जा सकती कि जनगणना के समय त्रुटि से ऐसा हुआ है। इसी भाँति जैसे विश्व में पुरुष जन्मों की अधिकता का कारण क्षेत्र विशेष में स्त्रियों की संख्या में कमी से स्पष्ट नहीं कर सकते, अन्य कारण भी इसके लिए उत्तरदायी हैं। यद्यपि रामचन्द्रन एवं देशपाण्डे ने अपने अध्ययन में भारत में जन्म के सतय लिंगानुपात में निम्न क्षेत्रीय विभिन्नता पाया है। इस समस्या के समाधान के लिए और अधिक परीक्षण की आवश्यकता है। अध्ययन में पाया गया है कि विशेष खाद्य पदार्थों की सहायता से बच्चे के लिंग निर्धारण में सहायता मिलती है।

वर्ष 2000 के दौरान विश्व में 1000 पुरुषों की तुलना में 986 स्त्रियाँ थी। इण्डानेशिया और जापान को छोड़कर अन्य एशियाई देशों में निम्न लिंग अनुपात का रिकार्ड दर्ज किया गया। संयुक्त राज्य, इण्डोनेशिया, रूसी गणराज्य तथा जापान में लिंग अनुपात का औसत विगत आधी सदी से यूनिट से अधिक बना हुआ है। पिछले 50 वर्षों में संयुक्त राज्य अमेरिका में लिंग अनुपात में सुधार ही हुआ है और यह 1002 से बढ़कर 1029 हो गया है। बांग्लादेश में भी लिंगानुपात में लगातार वृद्धि हो रही है। वहाँ 1950 में यह अनुपात 880था, जो 2000 में बढ़कर 953 हो गया है। पाकिस्तान और चीन में भी बढोत्तरी का रुख बना हुआ है। इस तरह विश्व के बड़े देशों में सिर्फ भारत ही एकमात्र अपवाद है।

तालिका 2.2 लिंगानुपात

वर्ष	लिंगानुपात
1901	972
1911	964
1921	955
1931	950
1941	945
1951	946
1961	941
1971	930
1981	935
1991	927
2001	933

2001 की भारतीय जनगणना के अनुसार, देश का लिंग अनुपात 933 है, जो 1911 के राष्ट्रीय औसत 927 से अधिक अवश्य है। वैसे कुछ अपवादों को छोड़कर 1901 से ही लिंगानुपात 972 था, जिसमें 1941 तक क्रमिक ह्रास का दौर चलता रहा। वर्ष 1951 में सिर्फ एक अंक की बढोत्तरी दिखाई दी, लेकिन उसके बाद के लगातार दो दशकों में फिर से गिरावट का रुख दिखाई दिया और 1970 में यह गिरकर 930 रह गया। बाद की जनगणनाओं में लिंगानुपात 930 के आस–पास ही लटकता रहा। 1901 में ग्यारह राज्यों एवं संघ क्षेत्रों में लिंगानुपात यूनिट से अधिक था। उनमें से केरल को छोड़कर सभी में आनुपातिक गिरावट आती रही। भारतीय लिंग अनुपात में आने वाली गिरावट के लिये जो राज्य जिम्मेदार है वे है उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखण्ड, उड़ीसाद्व छत्तीसगढ़, गुजरात, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और तमिलनाडु। हरियाणा, आन्ध्र प्रदेश तथा कर्नाटकमें लिंग अनुपात कुछ हद तक स्थिर है। पश्चिम बंगाल में 1901 से लेकर 1941 तक इसमें आंशिक गिरावट दिखाई दी और उसके बाद धीरे–धीरे अनुपात में बढोत्तरी होती गई एवं 2001 में बढ़कर 934 हो गया। 2001 की भारतीय जनगणना में बड़े राज्यों का लिंगानुपात 861 (हरियाणा) और 1058 (केरल) के बीच रहा। कुछ राज्य ऐसे भी है जहाँ लिंगानुपात राष्ट्रीय औसत से अधिक है।

भारत की ग्रामीण एवं शहरी जनसंख्या

अर्द्ध–विकसित देशों की एक प्रमुख विशेषता गाँव की प्रधानता है। यहाँ की अधिकांश जनसंख्या गाँवों में निवास करती है। शहरों की संख्या बहुत कम होती है तथा जनसंख्या का थोड़ा सा भाग ही शहरों में निवास करता है। भारत में भी यह विशेषता स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती हा 1991 की जनगणना के अनुसार देश की कुल जनसंख्या 84.6 करोड़ थी, जिसमें से 62.9 करोड़ जनसंख्या गाँवों में तथा 21.8 करोड़ जनंसख्या शहरों में निवास कर रही थी। 2001 की जनगणना में यह संख्या बढ़ गई, इस दौरान देश की कुल जनसंख्या 103.6 करोड़ थी, जिमसें से 74.3 करोड़ जनसंख्या गाँवों में तथा 28.6 करोड़ जनसंख्या शहरों में निवास कर रही थी। स्पष्ट है कि भारत की अधिकांश जनसंख्या (74.3 प्रतिशत) गाँवों में रह रही है। विकसित देशों में इसके विपरीत स्थिति देखने को मिलती है। वहाँ कुल जनसंख्या का अधिकांश भाग शहर निवासी है। 1995 में शहर में निवास कर रही जनसंख्या का प्रतिशत जहाँ भारत में 27 था वहाँ अमरीका में यह 76, जापान में 78 तथा इंग्लैण्ड में 90 था।

भारत गाँवों का देश है, परन्तु पिछले कुछ समय से जनसंख्या की प्रवृत्ति शहरीकरण की ओर रही है। विभिन्न जनगणनाओं में शहरों की जनसंख्या की तुलना सही–सही करना तो सम्भव नहीं है, क्योंकि इनमें शहर क्षेत्र की परिभाषाओं को बदला जाता रहा हैद्व परन्तु यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि शहरीकरण की प्रवृत्ति धीरे–धीरे बढ़ी है। 1901 और 2001 के बीच शहर की जनसंख्या में लगभग ग्यारह गुने से अधिक की वृद्धि हुई है। शहरी जनसंख्या का अनुपात इसी अवधि में 11 प्रतिशत से बढ़कर 28 प्रतिशत हो गया। देश का जैसे–जैसे आर्थिक विकास होगा वैसे–वैसे शहरी जनसंख्या में वृद्धि होगी।

तालिका 2.3 ग्रामीण और शहरी जनसंख्या की साक्षेप वृद्धि

वर्ष	जनंसख्या (करोड़)		कुल जनसंख्या का प्रतिशत	
	ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	शहरी
1901	21.3	2.5	89.2	10.8
1951	29.8	6.3	82.7	17.8
1971	43.9	10.9	80.1	19.9
1981	52.2	16.0	76.7	23.3
1991	62.9	21.7	74.3	25.7
2001	74.3	28.6	72.2	27.8

शहरी जनसंख्या में सापेक्ष वृद्धि के अनेक कारण रहे हैं, जिनमें से कुछ निम्न हैं–

1. स्वतंत्रता के पश्चात् देश का तेजी से औद्योगिक विकास हुआ है, जिससे कि शहरीकरण को बढ़ावा मिला है।

2. द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान बहुत से लोग काम के सिलसिले में शहरों में आये और फिर यहीं बस गये।

3. देश विभाजन के समय बड़ी मात्रा में शरणार्थी बड़े शहरों में आकार बस गये जिसमें शहरी जनसंख्या में बहुत तेजी से वृद्धि हुई।

4. जमींदारी प्रथा के उन्मूलन के पश्चात् बहुत से जमींदार गाँव छोड़कर शहरों में आ गये।

5. गाँव आर्थिक व सामाजिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं। वहाँ न तो लोगों को स्थायी रोजगार उपलब्ध है और न ही वहाँ शिक्षाद्व चिकित्सा तथा मनोरंजन की सुविधाएँ उपलब्ध हैं। जिसके कारण लोग गाँव को छोड़कर, शहरों में आकर बस जाते हैं। इसके अतिरिक्त गाँवों में जात–पांत, भूमि आदि के सिलसिले में झगड़े होते रहते हैं तथा वहाँ सुरक्षा का अभाव है जिसके फलस्वरूप लोग शहरों की ओर आकर्षित हो जाते हैं।

शहरीकरण जहाँ आर्थिक विकास का परिचारक है, वहाँ अत्यधिक शहरीकरण अनेक समस्याएँ भी उत्पन्नसे होती है। भीड़भाड़, गन्दी बस्तियों का विस्तार, मकानों की कमी आदि से सम्बन्धित समस्याएँ तो जटित होती है साथ ही बेरोजगारी की समस्या भी भयंकर रूप धारण कर लेती है। लोगो के चरित्र, स्वास्थ्य, कार्यक्षमता एवं मानसिक संतुलन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अतः इन समस्याओं के समुचित समाधान तथा शहरों के ठीक प्रकार से विकास की ओर पूरा ध्यान देना अति आवश्यक है। बड़े शहरों में जनसंख्या के तेजी से बढ़ने की प्रवृत्ति को यथासम्भव रोकना भी बहुत जरूरी है। इसके लिए सर्वाधिक आवश्यक है कि छोटे शहरों का विकास किया जाय तथा ग्रामीण क्षेत्रों में बिजली, सिंचाईद्व परिवहन, शिक्षा, स्वास्थ्य, सुरक्षा आदि की समुचित व्यवस्था की जाया तभी शहरों तथा गाँवों का अन्तर कम होगा तथा लोग शहरों की ओर अनावश्यक रूप से आकर्षित नहीं होंगे।

भारत में जनसंख्या वृद्धि को प्रभावित करने वाले कारक

भारत की जनसंख्या लगातार बढ़ रही है। विश्व में भारत दूसरा सबसे ज्यादा जनसंख्या वाला देश है। यह ऐसी अनचाही उपलब्धि है, जिसे कोई देश स्वीकारना नहीं चाहेगा। जनसंख्या पर नियंत्रण करने के लिए कई उपाय किये गये परन्तु वो पूरी तरह से कारगर सिद्ध नहीं हो सके। भारत की विकास को ग्रहण लगा रहा है बढ़ती जनसंख्या भारत में जनसंख्या वृद्धि को प्रभावित करने वाले कारक निम्नलिखित हैं।

(क) सामाजिक कारक रू मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। भारत के सन्दर्भ में तो यह विशेष रूप से लागू होता है। भारत में कई सामाजिक संस्थायें एवं रीति रिवाज है जो जनसंख्या वृद्धि में सहायक होते हैं। सामाजिक कारक में हम निम्न तथ्यों का अध्ययन करेंगें–

संयुक्त परिवार : संयुक्त परिवार में दो या दो से ज्यादा पीढी के लोग साथ रहते हैं। संयुक्त परिवार में सबसे बुजुर्ग व्यक्ति इसका मुखिया होता है एवं इस पर ही पूरे परिवार के पालन की जिम्मेदारी होती है, जिससे परिवार के बाकी सदस्यों पर जिम्मेदारी नहीं आ पाती। इस प्रवृत्ति से सभी छोटे परिवार के फायदे को नजर अंदाज करते हुए कई बच्चे पैदा करते हैं।

बाल–विवाह : भारत में प्राचीन काल से ही बाल–विवाह की प्रथा रही है। प्रथा के अनुसार काफी कम आयु में ही बच्चों का विवाह कर दिया जाता था। इससे अनेक वैवाहिक जीवन काफी लम्बा हो जाता था और अधिक संतान की उत्पत्ति होती थी। भारत में कई महापुरुष बाल विवाह की पीड़ा भोगी हैं। महात्मा गाँधी उनमें से एक हैं। यह प्रथा जनसंख्या वृद्धि के महत्वपूर्ण कारकों में से एक है।

निरक्षरता : भारत में साक्षरता दर यूरोप देशों के मुकाबले काफी कम है। निरक्षरता से व्यक्तियों में अंधविश्वास की भावना बढ़ती है। निरक्षरता के कारण व्यक्ति सही निर्णय नहीं ले पाता है। परिवार नियोजन, छोटा परिवार इन सभी के बारे में निरक्षर व्यक्ति की सोच सदैव नकारात्मक रही है इस कारण जनसंख्या वृद्धि में निरक्षता भी एक कारण रहा है।

विधवा विवाह : विधवा विवाह एक सराहनीय कदम है। इससे विधवा महिलाओं की पीड़ा में कमी आई है। यह एक सराहनीय कदम होने के बावजूद जनसंख्या वृद्धि में अपनी भूमिका निभाता है। विधवा विवाह के पश्चात् स्त्रियाँ अपना दूसरा वैवाहिक जीवन की शुरुआत करती है और संतानोत्पति करती है।

वंशवाद : भारतीयों में वंशवाद की प्रवृत्ति अन्य देशों के मुकाबले ज्यादा पाई जाती है। यहाँ पर व्यक्ति अपना वंश आगे बढ़ाने के लिए कई–कई बच्चे पैदा कर लेता है। सामाजिक स्तर पर भी उस व्यक्ति को ज्यादा सम्मान दिया जाता है। जिसका वंश ज्यादा बड़ा और पुराना है।

विवाह की अनिवार्यता : भारत में विवाह की अनिवार्यता वैदिक काल से हो रही है। कई सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक रीति रिवाज है जिसको . पूरा करने के लिए विवाहि

होना जरूरी है। यहाँ पर अविवाहित व्यक्तियों को सम्मान की दृष्टि से नहीं देखते हैं। विवाह की अनिवार्यता के कारण संतानोत्पति की संभावना काफी ज्यादा बढ़ जाती है।

सुरक्षा की भावना : भविष्य को लेकर असुरक्षा कीभावना के कारण भी व्यक्ति ज्यादा बच्चे पैदा करता है। व्यक्ति अपने बुढ़ापे के समय जब वहइसअसहाय हो जायेगा और पैसा कमाने की स्थिति में नहीं रहेगा तब उसके बच्चे उनकी सेवा करेंगे। कई बच्चे होने से उनमें से कोई न कोई उनकी सेवा करेगा, उनका अपने साथ रखेगा।

गरीबी निर्धनता : गरीब एवं निर्धन व्यक्ति ज्यादा बच्चे पैदा करते हैं। इसके पीछे का कारण यह है कि ज्यादा बच्चे यानि ज्यादा हाथ, ज्यादा हाथ यानि ज्यादा पैसे। निर्धन व्यक्तियों में यह धारण आम है कि बड़ा परिवार होने से उनके सभी सदस्य कोई रोजगार करके धन का अर्जन करेगे, इससे उनकी गरीबी दूर हो जायेगी। इसी धारणा के कारण वो अपने परिवार को काफी बढ़ा लेता है। जो पूरे समाज, देश एवं विश्व के लिए समस्या बन जाती है।

महिलाओं में माँ बनने की ललक : भारतीय महिलाओं में माँ बनने की ललकअन्य देशों की महिलाओं से ज्यादा देखने में मिलती है। महिलाएँ शादी के पश्चात् बहुत जल्दी ही गर्भधारण कर लेती हैं। भारतीय समाज में उन महिलाओं को सम्मान की दृष्टि से नहीं देखते जो विवाह के पश्चात् माँ नहीं बन पाती है, बल्कि उनको बाँझ कह कर उनका अपमान भी करते हैं। इस प्रवृत्ति के कारण भी जनंसख्या में वृद्धि हो जाती है। अन्ध विश्वास रू अन्ध विश्वास भी जनसंख्या वृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जीवन और मृत्यु मनुष्य के हाथों में नहीं बल्कि भगवान के हाथों में होती है। इसलिए अधिक बच्चे होने की जिम्मेदारी व्यक्ति विशेष की नहीं, बल्कि ईश्वर या भगवान की होती है।

(ख) आर्थिक कारक : हर व्यक्ति का सपना होता है कि उसे अपने सपनों को पूरा करने के लिए आर्थिक समस्यों का सामना ना करना पड़े। अपनी आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए भी व्यक्ति अपने परिवार को बढ़ाता है। भारत में कुछ जाति एवं धर्म के लोग बड़े परिवार को अभिशाप नहीं बल्कि अपने लिए आशीर्वाद मानते हैं। ज्यादा बड़ा परिवार ज्यादा आय के साधन इन परिवारों में यह देखा गया है कि यह अपने छोटे बच्चों को विद्यालयों में भेजने के बजाय होटलों, गैराजों में भेजना ज्यादा पसंद करते हैं।

(ग) प्राकृतिक कारक : भारत एक गर्म जलवायु वाला देश है। गर्म जलवायु के हो जाने केकारण यहाँ बालक एवं बालिकाओं में 13 एवं उनसे अधिक उम्र बाद वो संतानोत्पति के योग्य बन जाते हैं उनमें प्रजनन की शक्ति आ जाती है। बाल–विवाह एवं गर्म जलवायु के मिलन से भारत की जनसंख्या में तीव्र वृद्धि दर देखी जा सकती है।

(घ) धार्मिक कारक : भारतीय समाज में ऐसे कई धार्मिक मान्यतायें व्याप्त है जिनके लिए संतानो का होना अति आवश्यक है। दाह–संस्कार, श्राद्ध आदि के लिए पुत्र का होना आवश्यक है एवं पुत्र की चाह में कई बच्चों का जन्म होना। मोक्ष प्राप्ति के लिएद्व पितृ ऋण से मुक्ति पाने के लिए संतान की उत्पत्ति करना कन्यादान या कन्या का विवाह करना पुण्य काकार्य माना गया है। अविवाहितों को समाज में सही स्थान प्राप्त नहीं होना कुछ ऐसे धार्मिक कारण है जो जनसंख्या वृद्धि में सहायक होते हैं।

(ङ) जन्मदर एवं मृत्युदर : भारत में जन्मदर अन्य देशों के मुकाबले बहुत अधिक है, इससे प्रतिवर्ष हमारे देश में आस्ट्रेलिया के कुल जनसंख्या बराबर लोग जुड़ते हैं। वहीं दूसरी ओर चिकित्सा विज्ञान ने काफी तरक्की कर ली है, जिसके कारण हमने मृत्युदर पर काफी रोक लगा ली है। इससे हमारे देश की जनसंख्या काफी बढ़ी है।

(च)परिवार नियोजन के प्रति उदासीनता : भारत में कई धर्म एवं जाति के लोग परिवार नियोजन को अच्छा नहीं मानते हैं। कई पढ़े–लिखे परिवारों में भी परिवार नियोजन के तरीकों को लेकर काफी भ्रांतियाँ हैं जिसके कारण वो परिवार नियोजन के प्रति उदासीन रवैया रखते हैं। जनसंख्या वृद्धि में परिवार नियोजन की असफलता एक मुख्य कारण है।

(छ) महामारियों पर नियंत्रण : भारत में विज्ञान के क्षेत्र में काफी तरक्की कर ली है। कई महामारियों जैसे हैजा, प्लेग आदि पर नियंत्रण कर लिया है जिससे पहले गाँव के गाँव साफ हो जाते थे। इससे भी जनसंख्या में वृद्धि हुई है।

जन्म–दर

जन्मदर वार्षिक हिसाब से प्रत्येक एक हजार जनसंख्या के पीछे व्यक्त की जाती है। किसी क्षेत्र विशेष में प्रति हजार जनसंख्या में उत्पन्न बच्चों को जन्मदर माना जाता है। भारत में अन्य देशों की तुलना में जन्मदर अधिक है। जन्मदर और मृत्युदर के आंकड़ों मकें पंजीकृत और अनुमानित आधारों पर अन्तर पाया जाता है क्योंकि देश में सभी जन्में और मरने वालों के नाम रजिस्टर में पंजीकृत नहीं कराए जाते। भारत में जन्मदर 25.8 व्यक्ति प्रति हजार प्रति वर्ष है जो कि विश्व के अन्य दशों की तुलना में चीन को छोड़कर सर्वाधिक है। भारत में जन्म दर का इतिहास हमें निम्न तालिका से ज्ञात होता है।

तालिका – भारत में औसत जन्मदर

अवधि	जन्मदर
1901—1910	49.20
1911—1920	48.10
1921—1930	46.40
1931—1940	45.20
1941—1950	39.90
1951—1960	41.70
1961—1970	41.10
1971—1980	27.20
1981—1991	32.50
1994—1995	28.30

भारत के ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में भी जन्म–दर में भिन्नता है। शहरों की तुलना में गाँवों में जन्म दर अधिक है। यह भिन्नता प्रान्तीय आधार पर देखी जा सकती है, भारत में सबसे अधिक जन्मदर असम की है और सबसे कम तमिलनाडु की।

भारत में जन्म–दर को प्रभावित करने में वहाँ की सामाजिक दशाओं, मृत्यु–दर, भ्रूण हत्या, बांझपन, वैयक्तिक स्वतंत्रता, स्वास्थ्य की दशाएं, महत्वाकांक्षाएं आदि का महत्वपूर्ण योगदान

होता है। भारत में ऊँची जन्म–दर के अनेक कारण हैं, जैसे–गर्म जलवायु, बाल विवाह का प्रचलन, मनोरंजन के साधनों का अभाव, संयुक्त परिवार प्रणाली, विवाह की अनिवार्यता, चिकित्सा सुविधाओं में वृद्धि, भाग्यवादिता आदि। भारत में जन्मदर को प्रभावित करने में शिक्षा, व्यवसाय, धर्म, ग्रामीण और शहरी निवास, जाति आदि कारकों ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

मृत्यु दर

जनसंख्या वृद्धि का एक प्रमुख कारण मृत्यु दर में कमी का होना है। मृत्युदर भी वार्षिक हिसाब से प्रत्येक एक हजार जनसंख्या के पीछे व्यक्त की जातीहै। भारत में मृत्यु दर निम्न तालिका में दर्शायी गयी है–

तालिका – भारत में औसत मृत्युदर

अवधि	जन्मदर
1901–1910	42.60
1911–1920	47.20
1921–1930	36.30
1931–1940	31.20
1941–1950	27.40
1951–1960	22.80
1961–1970	18.90
1971–1980	15.00
1981–1991	11.47
1994–1995	9.0

उपुर्यक्त तालिका से स्पष्ट है कि भारत में मृत्यु दर सन् 1921 से काफी कम होती गयी है। भविष्य में मृत्यु दर में और कमी का अनुमान है। इसके बाद भी भारत में मृत्यु दर अन्य विकसित की तुलना में मृत्यु दर कम होते जाना स्वास्थ्यकर स्थितियों तथा काफी अधिक है। भारत में जीवन स्तर उन्नत होना ही दर्शाता है। जन्म–दर की भांति ही मृत्युदर के पंजीकृत और अनुमानित आंकड़ों मेंभी भिन्नता पाई जाती है। जन्म–दर की तरह मृत्युदर भी भारत में अन्य देशां की तुलना में अधिक है, क्योंकि यहाँ स्वास्थ्य का स्तर और जीवन स्तर निम्न है, पौष्टिक आहार की कमी है तथा चिकित्सा सुविधाओं का अभाव है। इनके अतिरिक्त, यहाँ गरीबी और महामारी का प्रकोप भी रहा है। मृत्युदर को कम करने के लिए आवश्यक है कि लोगों को समुचित मात्रा में चिकित्सा की सुविधाएँ दी जाए, मातृत्व एवं शिशु कल्याणकी संस्थाओं की स्थापना की जाए, शिक्षा का प्रसार किया जाएद्व जीवन स्तर को ऊँचा उठाने, संतुलित आहार देने एवं उद्योगों में स्वस्थ वातावरण का निर्माण करने हेतु प्रयत्न किए जाएँ।

साक्षरता की स्थिति

भारत में साक्षरता सम्बंधी जानकारी 1872 की जनगणना से प्रारम्भ की गई तथा वर्तमान 2001 की जनगणना तक विभिन्न जनगणनाओं में जानकारी प्राप्त की गई है। सर्वप्रथम

1872 से 1881 के मध्य साक्षरता दर को तीन वर्गों में विभक्त किया गया था। सीखना, साक्षर और असाक्षर। 1901 तथा उसके पश्चात् की जनगणना में साक्षर तथा असाक्षर वर्गीकृत किए गए। 1931 के पश्चात् साक्षरता की परिभाषा में न्यूनाधिक समानता है। 1971 की जनगणना के अनुसार साक्षरता को इस प्रकार पारिभाषित किया गया है–"वह व्यक्ति जो किसी जो किसी भाषा को समझने के साथ पढ़ तथा लिख सकता है साक्षर माना गया है। 1981 की जनगणना मे साक्षरता की परिभाषा है ष्वह व्यक्ति जो किसी भाषा को समझ सकता है और उसे लिख और पढ़ सकता है, साक्षर माना साक्षर जायेगा। वह व्यक्ति जो सिर्फ पढ़ सकता है लेकिन लिख नहीं सकता, नहीं माना जायेगा। साक्षर होने के लिए यह जरूरी है कि सम्बन्धित व्यक्ति ने औपचारिक रूप से शिक्षा प्राप्त की हो या कोई परीक्षा पास की हो।''

जनगणना के दौरान उन्हें साक्षर माना जाता है जिनकी उम्र सात वर्ष या उससे अधिक है और वह किसी भाषा में पढ़ सकता है और लिख भी सकता है। भारत में साक्षरता का प्रतिशत निम्न तालिका से स्पष्ट होता है।

तालिका – साक्षरता का विकास (1901–2001)

वर्ष	5.35	9.53	0.69
1901	9.92	10.56	1.05
1911	7.16	12.21	1.81
1921	9.50	15.59	2.93
1931	–	–	–
1941	15.67	24.95	7.93
1951	24.02	34.44	12.95
1961	29.46	39.45	18.72
1971	36.23	46.89	24.82
1981	52.11	63.86	39.42
1991	65.38	75.85	54.16
2001			

सन् 1991 की जनगणना से पहले पाँच वर्ष से छोटे बच्चों को साक्षरता की कोटि में नहीं आ सकता है। इस श्रेणी में शामिल होने के लिए विद्यालीय पृष्ठभूमि या वैसी निपुणता प्राप्त करना अनिवार्य था। इसलिए 1991 की जनगणना में यह निर्णय लिया गया कि 6 वर्ष के उम्र समूह के बच्चों को निरक्षरों की श्रेणी में रखा जाए और सात वर्ष से अधिक उम्र वाले बच्चों को ही साक्षर या निरक्षर की कोटि में शामिल किया जाए। 2001 की जनगणना मे भी यहीं मानदण्ड अपनाया गया। 2001 की जनगणना में भी यही मानदण्ड अपनाया गया, 2001 की जनगणना के बारे में सबसे महत्वपूर्ण जानकारी यह है कि साक्षरता दर में बढोत्तरी होने के साथ–साथ साक्षर लोगों की संख्या में वृद्धि हुई है। भारत में सात वर्ष से अधिक उम्र के लोगों में साक्षर लोगों का अनुपात 65.38 प्रतिशत है, जो पिछली जनगणना यानि 1991 की अपेक्षा 13.17 प्रतिशत अधिक है। महिला साक्षरता भी 14.87 प्रतिशत वृद्धि के साथ 54.16 प्रतिशत हो गई है जबकि पुरुष साक्षरता में 11.77 प्रतिशत की बढोत्तरी हुई है और इस समय यह 75.87 प्रतिशत है। तदनुसार, स्त्री–पुरुष साक्षरता का अंतर भी घटकर21.70 प्रतिशत हो गया है और 1951 से अब तक में यह अन्तर सबसे कम है। बड़े

राज्यों में 90.92 प्रतिशत के साथ केरल सबसे आगे है। जहाँ स्त्री–पुरुष अन्तर भी काफी कम अर्थात् 6.34 प्रतिशत है। साक्षरता में सुधार की उल्लेखनीय विशेषता है। छत्तीसगढ़ (22.27) एवं मध्य प्रदेश (19.44) की साक्षरतादर में आंशिक वृद्धि। महिला साक्षरता दर में सर्वाधिक वृद्धि छत्तीसगढ़ (24.87) और राजस्थान (23.90) व मध्य प्रदेश (20.73) राज्यों में अनुभव किया गया।

सारांश

जनांकिकी पृष्ठभूमि

जनांकिकी जनसंख्या शिक्षा के पहलुओं एवं अवधारणाओं का अध्ययन करता है।

- जनसंख्या का आकार।
- जनसंख्या का वितरण।
- जनसंख्या का गठन
- जनसंख्या में परिवर्तन के पहलू।

जनांकिकी का क्षेत्र

हाउजर, डंकन आइरीन और टेवर इत्यादि विद्वानों ने जनांकिकी के क्षेत्र की व्याख्या संकुचित दृष्टिकोण से की है जबकि वान्स, स्पेंगलर, मूर आदि ने इसके व्यापक दृष्टिकोण की व्याख्या की है।

जनांकिकी की विषय–वस्तु

- जनसंख्या का आकार।
- जनसंख्या की संरचना एवं बनावट।
- जनसंख्या का वितरण।
- जनसंख्या में परिवर्तन के पहलू।

जनसंख्या वितरण एवं घनत्व

1991 की जनगणना के अनुसार भारत का जनसंख्या घनत्व 267 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर के हिसाब से जन घनत्व 1921 मे 81, 1951 में 117,1961 में 142, 1971 में 177, 1981 में 221, 1991 में 267 और 2001में 324 था।

जनसंख्या घनत्व दिल्ली में सर्वाधिक 6352, चण्डीगढ़ में 7903, पाण्डिचेरी में 2029, लक्षद्वीप में 1894, दमन एवं द्वीप में 1411 है।

जनसंख्या की संरचना एवं बनावट

1. आयु संरचना।

2. लिंग संरचना।

3. भारत की ग्रामीण एवं शहरी जनसंख्या

भारत में जनसंख्या वृद्धि को प्रभावित करने वाले कारक

- सामाजिक कारक
- संयुक्त परिवार
- बाल विवाह
- निरक्षता
- विधवा विवाह
- वंशवाद
- विवाह की अनिवार्यता
- सुरक्षा की भावना
- गरीबी एवं निर्धनता
- अन्धविश्वास

आर्थिक कारक।

प्राकृतिक कारक।

धार्मिक कारक।

जन्मदर एवं मृत्युदर।

परिवार नियोजन के प्रति उदासीनता।

महामारियों पर नियंत्रण।

अभ्यास प्रश्न

- जनांकिकी के क्षेत्र एवं विषय–वस्तु बताइये।
- जनांकिकी का अर्थ और उद्देश्य बताइये।
- भारत की जनसंख्या की मृत्यु दर, जन्म–दर तथा लिंगानुपात पर संक्षिप्त प्रकाश डालें।
- जनसंख्या वृद्धि को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए।

UNIT-III : POPULATIONAND QUALITY OF LIFE

- Population in selation to socio-economic development
- Health status health service
- Nutrition, environment, resource education provision

जनसंख्या वृद्धि तथा आर्थिक विकास

सामाजिक एवं आर्थिक विकास दोनों ही एक सिक्के के दो पहलू हैं। किसी भी राष्ट्र का उत्थान उसकी आर्थिक एवं सामाजिक विकास एवं प्रगति पर निर्भर करता है। आर्थिक विकास एक सतत् चलने वाली दीर्घकालीन प्रक्रिया है। यह देश की अर्थव्यवस्था को मजबूत करने के साथ ही साथ राष्ट्रीय आय में भी वृद्धि करता है। किसी भी राष्ट्र की कुल आय एवं प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि होने के लिए आवश्यक है कि उत्पादन के समस्त उपलब्ध संसाधनों का अधिकतम उपयोग हो। इसके साथ ही यह भी आवश्यक हो जाता है कि नई–नई तकनीकों एवं उत्पादन कौशलों का भी विकास होता रहे। उत्पादन में भूमि, श्रम तथा पूँजी अपने किसी न किसी रूप में प्रयुक्त होती है और ये तीनों संसाधन एक–दूसरे के पूरक होते हैं इनमें से एक में भी किसी प्रकार की कमी होने पर उत्पादन को उसके विकास के चरमोत्कर्ष पर नहुँ पहुँचाया जा सकता है। उपुर्यक्त तीनों संसाधनों में भूमि सीमित है इसमें परिवर्तन सम्भव नहीं है लेकिन पूँजी एवं श्रम में परिवर्तन सम्भव है इसे आवश्यकतानुसार घटाया बढ़ाया जा सकता है। पूँजी का निर्माण श्रम एवं उसके कौशल तथा जनशक्ति की बचत की प्रवृत्ति तथा विनियोग पर निर्भर करता है।

संसाधनों का उत्पादन में योगदान का अध्ययन किया जाये तो यह निष्कर्ष निकलेगा कि विश्व की किसी भी अर्थव्यवस्था में उत्पादन को बढ़ाने के लिए जो कि आर्थिक विकास का साधन होता है, इसमें निःसदेह यह स्पष्ट है कि मानवीय संसाधनो की उपयोगिता सर्वोपरि है, क्योंकि बिना मानवीय श्रम के अन्य देशों संसाधनों के उपयोग से उत्पादन संभव ही नहीं है। इसके अलावा कुछ कारक जैसे उद्यमता एवं जोखिम उठाने की क्षमता भी मानव शक्ति एवं इसकेविकास के हर स्तर से जुड़ी है। अब यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि जनसंख्या जो कि उत्पादन का एक प्रमुख संसाधन है, परन्तु क्या कारण है कि अनेक ऐसे अविकसित, अल्पविकसित एवं विकासशील देश जहाँ आर्थिक विकास की धीमी गति का कारण बढ़ती हुई जनसंख्या को माना जा रहा है। इसका एक मात्र जवाब यह हो सकता है कि किसी भी देश में जनसंख्या वृद्धि औचित्य का आंकलन वहाँ उपलब्ध उत्पादन संसाधनों यथा भूमि, पूँजी एवं आधुनिक तकनीकी, विकास स्तर से किया जा सकता है। उदाहरणार्थ किसी भी देश में जहाँ प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता के साथ–साथ तकनीकी और औद्योगिक विकास भी उच्च्च स्तर को हो तो त्रुटि व्यक्ति आय और उत्पादन निरन्तर बढ़ेगा। इसके विपरीत यदि जनसंख्या में वृद्धि तीव्र गति से बढ़े तो उत्पादन के सभी संसाधनों का उपभोग के उत्पादन में ही लग जायेगा, जिसके कारण कुल राष्ट्रीय आय और प्रति व्यक्ति आय से भी कमी आने लगेगी इस स्थिति में बढ़ी हुई मानवीय शक्ति भी देश के लिए द्योतक ही सिद्ध होगी।

बढ़ती हुई जनसंख्या पर अर्थशास्त्रियों की धारणा स्पष्ट नहीं रही है। कुछ अर्थशास्त्री बढ़ती हुई जनसंख्या को देश के हित में तो कुछ अर्थशास्त्री इसे देश के विकास में बाधक

मानते हैं। इन दोनों मतों का विस्तृत विवेचना करने पर ज्ञात होता है कि यह देश को फायदा कम नुकसान ज्यादा होता है। इसकी विस्तृत विवेचना इस प्रकार है–

जनसंख्या वृद्धि आर्थिक विकास में सहायक है

इस विचारधारा से आज अधिकांश अर्थशास्त्री असहमत है। वर्तमान अर्थशास्त्री का स्पष्ट मत है कि जनसंख्या में बढोत्तरी न होने से बेरोजगारी बढेगी तथा उपयोग कम होगा सही नहीं है क्योंकि उपयोग में वृद्धि के लिए जनसंख्या में वृद्धि का होना आवश्यक नहीं है। आय बढ़ने से ही उपभोग में वृद्धि की प्रवृत्ति देखने को मिलती है। वर्तमान अर्थशास्त्रियों की तो यह भी मान्यता है के रोजगार का स्तर, औद्योगीकरण, नवप्रवर्त्तनों एवं तकनीकी विकास उत्पत्ति पर नेर्भर करता है। इसका जनसंख्या वृद्धि से कोई सीधा एवं प्रत्यक्ष सम्बंध नहीं है।

वर्तमान समय में विश्व के विभिन्न विकासशील देशों की प्रमुख समस्या 1) आर्थिक विकास की धीमी गति तथा जनवृद्धि की ऊँची दर है। सामान्यतः विकास की मन्द गति का कारण, जनसंख्या वृद्धि की तीव्र गति को ही माना जा राम है। यदि बढ़त हुई जनसंख्या के साथ प्रति व्यक्ति आय बढ़े तो आर्थिक विकास पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। अन्यथा विकास की दर पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। अतः बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ प्रति व्यक्ति बढ़ती हुई आय के स्तर को बनाए रखना आवश्यकीय होगा।

विकास की दृष्टि से यथावत् जनसंख्या वृद्धि आर्थिक विकास में बाधक

इस मत से भारत के ही नहीं बल्कि विश्व के कई विद्वान, अर्थशास्त्री सहमत है। अनेक राष्ट्र अपनी आय का अधिकांश भाग भोजन, स्वास्थ्य, शिक्षा तथा अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति में ही व्यय करते है। यदि जनसंख्या में लगातार इसी तरह वृद्धि होती रही है तो देश की कुल आय का अधिकांश भाग जनसंख्या की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति पर ही व्यय हो जायेगा। इससे देश का आर्थिक विकास रुक जायेगा अथवा काफी मंदगति से बढ़ेगा। विकसित हो रहे राष्ट्र में 65 वर्ष के वृद्धों की संख्या में वृद्धि होती जा रही है तथा 15 वर्ष से कम आयु के बच्चों की संख्या लगभग 40 प्रतिशत रहती है, जनसंख्या पर आर्थिक भार अधिक रहता है। विशेषज्ञों ने इस पर अनुमान लगाया है कि जनसंख्या की वृद्धि के प्रतिशत का चौगुना, इस बढ़ती हुई जनसंख्या के भोजन, कपड़े, मकान, शिक्षा, बच्चों एवं वृद्धों को देखरेख पर व्यय करना पड़ेगा। जिसका सीधा अर्थ यह हुआ कि यदि जनसंख्या वृद्धि की दर 2 प्रतिशत है तब लगभग 8 प्रतिशत राष्ट्रीय आय इस बढ़ी हुई जनंसख्या की इस आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आवश्यक होगी। इसमें कोई संदेह नहीं है कि जनसंख्या वृद्धि का कुप्रभाव राष्ट्र के आर्थिक विकास पर पड़ता है तथा प्रगति की गति धीमी हो जाती है।

जनसंख्या वृद्धि का कुप्रभाव निम्नलिखित है–

1. प्रति व्यक्ति कम भोजन मिलने से कुपोषण तथा कम पोषण का विकास होता है। इससे समाज की उत्पादक क्षमता कम होती है और उत्पादन में भी कमी आती है।

2. प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि नहीं होती है। अतः परिवार अपने विकास हेतु अधिक व्यय नही कर पाते है। उनकी बचत भी कम होती है। इसका परिणाम यह होता है कि भविष्य के लिए निवेश प्रायः हो ही नही पाता है।

3. राष्ट्र का अधिकांश धन सामाजिक सेवा गतिविधियों में ही व्यय हो जाता है। अतः आर्थिक अवरुद्ध होता है।

4. वर्तमान आवश्यकताओं पर ही अधिक धन व्यय होने से बचत कम होती जाती है। बचत कम होने से निवेश भी कम ही बचती है। इससे आर्थिक विकास कम होता है।

5. जनसंख्या वृद्धि से राष्ट्रीय और प्रति व्यक्ति आय में परिवर्तन होने से पूँजी और श्रम का अनुपात बदलता है।

6. प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष तौर से भारत की कई समस्याओं की जड़ जनसंख्या वृद्धि है। इस पर रोक लगाना आवश्यक है।

7. हॉव महोदय का मत है कि जनसंख्या वृद्धि से लोगों का समय क्षितिज सीमित हो जाता है और वे अपनी वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति में ही लगे रहते हैं। इससे पूँजी निर्माण प्रायः नहीं हो पाता है। इस प्रकार तीव्र जनसंख्या विकास, आर्थिक विकास में बाधक होता है और जीवन स्तर गिरता है। पिछले तीन दशकों का इतिहास इस बात का साक्षी है कि यद्यपि देश की आर्थिक स्थिति में बढोत्तरी हुई है। परन्तु बेहिसाब बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण हमारे विकास का लक्ष्य तथा उसकी।हम उपलब्धियाँ एक ओर उस गति से नहीं बढ़ सकी है जिसकी अपेक्षा हम करते थे। राष्ट्र का आर्थिक विकास व्यक्ति के जीवन स्तर अथवा सामाजिक स्तर को प्रभावित करता है। उच्च आर्थिक विकास, उच्च सामाजिक स्तर को बढ़ाता है। सीधी और सटीक बात यह है कि विकसित देशों का उच्च आर्थिक स्तर उनके सामाजिक स्तर की उच्चता का भी कारण बनता है। तीव्र जनसंख्या वृद्धि आर्थिक विकास में बाधक किस प्रकार होती है। यह आसानी से समझा जा सकता है।

राष्ट्रीय आय

भारत की राष्ट्रीय जी. एन. पी. लगभग 98000 करोड़ तथा एन. एन. पी. 18000 करोड़ रुपये है। सन् 1970–71 के मूल्यों पर यह लगभग 46000 करोड़ रुपये के बराबर होता है। यह आँकड़े विश्वसनीय नहीं कहे जा सकते, क्योंकि सभी उत्पादनकर्ता तथा अर्थव्यवस्था के सहभागी अपना उत्पादन, बिक्री, आमदनी तथा लाभ सामान्यतः कम ही दिखते हैं। भारत में राष्ट्रीय आय 53 प्रतिशत के हिसाब से बढ़ी है। परन्तु यहाँ जनसंख्या वृद्धि के कारण राष्ट्रीय आर्थिक विकास का लाभ समाज को नहीं मिल पाया है। भारत में जनसंख्या की वृद्धि दर 2.5 प्रतिशत रही है। यदि हम मान भी ले कि भारत में 5 प्रतिशत आर्थिक विकास भी हुआ तब भी यहाँ प्रति व्यक्ति को आय को लगभग 25 प्रतिशत ही बढ़ी है, इसको दुगुना होने में लगभग 28 वर्ष उगगा। भारत में प्रथम तीन पंचवर्षीय योजनाओं में राष्ट्रीय आय 3.3 प्रतिशत ही बढ़ी है। दूसरी ओर प्रति व्यक्ति आय में 2.2 प्रतिशत ही रही है। राष्ट्रीय आय और प्रति व्यक्ति आय का यह अन्तर जनसंख्या वृद्धिदर अधिक होने से ही भारत में राष्ट्रीय आय और प्रति व्यक्ति आय वृद्धि दर बहुत कम है। यदि भारत में आर्थिक

विकास तथा जनसंख्या वृद्धि की स्थिति ऐसी ही बनी रही तब देश से गरीबी दूर करना बहुत कठिन ही होगी।

भारत राष्ट्रीय आय की दृष्टि से विश्व का पाँचवां बड़ा देश है।अमेरिका, रूस, चीन और इंग्लैण्ड की राष्ट्रीय आय हमारे देश की राष्ट्रीय आय से अधिक है। दक्षिण अफ्रीका की राष्ट्रीय आय से उमारे देश की राष्ट्रीय आय लगभग पाँच गुनी है। आस्ट्रेलिया से 3गुनी एवं कैनेडा के बराबर है। यह अन्तर और ज्यादा हो सकता था अगर जनसंख्या में कमी लाई जा सकती।

प्रति व्यक्ति आय

भारत में प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि के साथ–साथ कमी और वृद्धि दर की धीमी गति को देखी जा सकती है। में लगभग 250 रुपये प्रतिवर्ष थी। भारत में प्रति व्यक्ति आय वर्ष 1948–49 सन् 1976 के मूल्यों पर यह 1976 मेंबढ़कर 1005 रुपये हुई परन्तु वर्ष 1960–61 के मूल्यों पर यह 366 रुपया ही थी। सन् 1981 में मूल्य 1947–48 की तुलना में लगभग 5 गुने अधिक ही देखने को मिले हैं। अतः यह 250 रुपया ही प्रति व्यक्ति आय कहलाई जिसका सीधा अर्थ यह हुआ कि प्रति व्यक्ति आय में कोई भी वृद्धि दर्ज नहीं की गई। वर्तमान समय में भी प्रति व्यक्ति आय निकालने का आधार वर्ष 1970–71 के मूल्य ही है। अगर आधार वर्ष 2000–01 को मानकर प्रति व्यक्ति आय निकाले जाये तो आंकड़े ज्यादा चौकाने वाले प्राप्त होगे। भारत की राष्ट्रीय आय में लगातार वृद्धि देखी जा रही है। इस कारण आंकड़ो को विश्वसनीय मानते हुए हम कह सकते हैं कि भारत में आर्थिक विकास काफी हुआ है। जनसंख्या वृद्धि ने इस उपलब्धियों को काफी कम कर दिया है या फिर यह कहे कि जनसंख्या वृद्धि के कारण भारत में प्रति व्यक्ति आय में कोई बढोत्तरी नहीं हुई है। वर्तमान समय में गरीबों तथा मध्यम वर्ग के लोगों की माली हालत, अब पहले से कहीं ज्यादा अच्छी है परन्तु महंगाई के दैत्य ने गरीबों की संख्या में इजाफा ही किया है। अमीर और गरीब के बीच की खाई बढ़ी ही है। अमीर और ज्यादा अमीर होते गये वहीं गरीब और ज्यादा गरीब होते गये। ग्रामों की हालत तो शहरों से काफी ज्यादा खराब है। यहाँ भूमिहीन मजदूर, बेरोजगार तथा निम्न वर्ग के लोग महँगाई के कारण अर्द्धभुखमरी की हालत में है।

जनसंख्या वृद्धि एवं उत्पादन

जनसंख्या एवं उत्पादन की वृद्धि में काफी अंतर देखने को मिलता है यह अंतर आगे चलकर और ज्यादा बढ़ेगा जिससे भुखमरी, कालाबाजारी, महँगाई देखने को मिलेगा। जनसंख्या दुगनी गति से बढ़ती है जैसे–2,4,8,16,32,64...... वहीं खाद्यान्न उत्पादन पर ध्यान देने से पता चलता है कि इसकी वृद्धि क्रमिक संख्या जैसे–2,4,6,8,10, 12, 14, ... से होती है। इससे हम आने वाले समय में खाद्यान्न संकट का अंदाजा आराम से लगा सकते हैं। भारत में खाद्यान्न उत्पादन में विविधता देखने को मिलती है। चाय और तिलहन के उत्पादन में भारत जहाँ विश्व में प्रथम है वहीं चावल तथा सूती डोरे के उत्पादन में द्वितीय, तम्बाकू में तृतीय, रबर में पाँचवे, शक्कर में सांतवे स्थान पर आता है। हरितक्रांति के परिणाम स्वरूप चावल, मक्का, ज्वार के उत्पादन में बहुत अधिक वृद्धि हुई है। खाद्यान्न उत्पादन के मामले में भारत अब आत्मनिर्भर है। आज गरीबों की संख्या में इजाफा हुआ है। इस कारण उनके उपयोग में वृद्धि तो नहीं कर पाये हैं परन्तु वे उत्तम स्तर का अनाज

अवश्य खाने लगे हैं। उन्हें दो समय का भोजन आसानी से प्राप्त होने लगा है एवं उन्हें खाद्यान्न की कमी भी महसूस नहीं होती है।

वर्ष 2001–2002 में खाद्यान्न उत्पादन प्रति हेक्टेयर 1734 मिलियनहेक्टेयर, दाले 607 मिलियन हेक्टेयर, चावल 2079 मिलियन हेक्टेयर, गेहूँ 2762 मिलियन हेक्टेयर, तिलहन 913 मिलियन हेक्टेयर था जो 2006–07 में बढ़कर क्रमशः 1750 मिलियन हेक्टेयर 616 मिलियन हेक्टेयर. 2127 मिलियन हेक्टेयर, 2671 मिलियन हेक्टेयर और 917 मिलियन हेक्टेयर हो गया था। यह बढ़ोत्तरीआगे आने वर्षों में भी जारी थी।

भारत ने अब अपने कृषि उत्पादन के साथ–साथ औद्योगिक उत्पादन में भी पर्याप्त वृद्धि दर्ज करवाई है। हम अब लगभग प्रत्येक प्रकार की मशीने बनाने लगे हैं। हम इस्पात उत्पादन 5 गुना, औद्योगिक उत्पादन 3 ½ गुना, बिजली का उत्पादन 15 गुना, ऐल्यूमीनियन का 52 गुना, कास्टिक सोड़ा का 121 गुना हो गया है। हमारे यहाँ सम्पन्न औद्योगिक घरानों की संख्या में भी पर्याप्त वृद्धि हुई है। 35 करोड़ से अधिक सम्पत्ति वाले घरानों की संख्या 30 एवं 5 करोड़ से अधिक की संख्या 50 है। हमारा औद्योगिक उत्पादन लगभग 1400 करोड़ वार्षिक था, जो अब 30 बर्षों में बढ़कर 23103 करोड़ रुपये हो गया है। हमारे देश में उपभोग की प्रवृत्ति उत्पादन बढ़ाने में कारगर तो सिद्ध नहीं हुआ परन्तु यह नीति बांग्लादेश के युद्ध के समय उपयुक्त सिद्ध जरूर हुई। पाकिस्तान ने आयात तथा उपयोग उत्पादन के द्वारा उपयोग सुलभ बनाया। इससे पाकिस्तान अपना औद्योगिक विकास नहीं कर सका। परन्तु भारत में औद्योगिक विकास सक्षम और सबल रहा। उपभोग के अतिरिक्त अन्य उत्पादन बढ़ाने से देश समृद्ध ही हुआ है। परन्तु अभी भी भारत में भारीपूँजीगत उद्योगों की स्थापना आवश्यक है।फिर भी हमारे देश में उपयोग की वस्तुओं की पूर्ति उनकी माँग से आगे ही रही है। इसके निम्नांकित कारण रहे हैं–

1. रोजगार तथा आय स्तर में वृद्धि।

2. मौद्रिक प्रसार तथा बढ़ते हुए विनियोजन से सामान्य क्रय शक्ति का बढ़ाना।

हमें अपने उत्पादन में और अधिक वृद्धि करना है इसके लिए जनसंख्या वृद्धि दर पर लगाम लगाना अनिवार्य है। जापान जैसे छोटे देश में उत्पादन द्वारा आर्थिक विकास दर 13 प्रतिशत से 18 प्रतिशत वार्षिक है, जबकि हमारे यहाँ औद्योगिक विकास 5 प्रतिशत ही है। हमारे देश में 1988 में आये बाढ़ एवं सूखे जैसे प्राकृतिक आपदाओं के बावजूद भी हम अपनी विकास दर में वृद्धि करने में कामयाब रहे हैं।

जनसंख्या वृद्धि एवं आवास समस्या

भारत में आवास की समस्या उतनी विकराल नहीं है जितनी अन्य देशों में है। भारत में आवास गंदी जगहों छोटे बद कमरे, हवा एवं खुली जगह का अभाव, जल निकासी की समुचित व्यवस्था का ना होना इत्यादि समस्याओं से ग्रसित है। प्रत्येक भारतीय का एक सपना होता है कि उकसा खुद का एक घर हो चाहे वह छोटा ही क्यों न हो। इस कारण आवास की समस्यायें हल नहीं हो पा रही है। पंचवर्षीय योजनाओं में आवास के लिए राशि उपलब्ध करवाई जाती है। इन योजनाओं में शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में आवास के व्यवस्था के उन्नत करनेलिए भी अनेक मद उपलब्ध करवाये जाते हैं। आवास समस्या काफी

खर्चीली एवं इतनी विशाल है कि यह जनसंख्या वृद्धि के अनुपात में इसको नहीं बढ़ाया जा सकता है। शहरों में यह समस्या और भी विकराल रूप ले लेती है। जिस तरह हाल के वर्षों में महानगरों की जनसंख्या बढ़ी है उसी हिसाब से आवास नहीं बढ़े हैं। ऐसे में लोगों को झुग्गी झोपड़ी में रहने या फिर महंगे किरोय पर छोटे–छोटे घरों में रहने के लिए मजबूर रहते हैं जिससे उनको आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है। ग्रामों में यह समस्या काफी कम देखने को मिलती है। ग्रामों में अधिकांश व्यक्तियों के पास रहने के लिए स्थान एवं स्वयंका घर या फिर पुश्तैनी घर रहता है। आँकड़ों की माने तो ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 94 प्रतिशत व्यक्तियों के लिए आवास उपलब्ध रहता है। शहरी क्षेत्र से ग्रामीण क्षेत्रों में आये व्यक्तियों एवं महिलाओं को आवास की कम बल्कि उनमें रहने वाली आवश्यक सुविधाओं के ना होने से असुविधा ज्यादा रहती है। यह समस्या का मूल कारण इन घरों में शौचालय एवं मूत्रालय तथा स्नानघर का ना होना या फिर इन जगहों पर दरवाजे की जगह परदों का प्रयोग करना। शहरों में आवास व्यवस्था केवल लगभग 46 प्रतिशत जनसंख्या के लिए ही उपलब्ध रहती है। शहरों तथा ग्रामीण क्षेत्रों दोनों में आवश्यकतानुसार घरों की व्यवस्था विकसित नहीं हो पाई है। शहरों के बाहर स्लम तथा झोपड़ियों के विकास ने शहरों की समस्याओं को और बढ़ाया है। इन झोपड़ियों ने सरकारी जमीन पर अतिक्रमण करते हैं साथ ही साथ चोरी की बिजली का प्रयोग करते हैं। इससे सरकार को प्रतिवर्ष करोड़ों रुपये का नुकसान होता है। सन् 1971 की जनसंख्या के अनुसार लगभग 70 प्रतिशत व्यक्ति एक कमरे के मकान में पूरे परिवार के साथ रहते हैं। प्रत्येक औसतन एक कमरे में 2.61 व्यक्ति रहते थे। 1.93 कमरे औसतन प्रति परिवार को मिल पाते थे। दिल्ली, मद्रास, कलकत्ता, इलाहाबाद, कानपुर, मुम्बई, अहमदाबाद, बनारस, हैदराबाद, आदि बड़े शहरों में घरों की समस्या बहुत कठिन है तथा 60 प्रतिशत से 70 प्रतिशत जनता एक कमरे में ही रहती है। विशेषज्ञों की माने तो भारत की जनसंख्या में 130 लाख एवं इससे भी ज्यादा व्यक्ति प्रति वर्ष इसमें जुड़ते हैं इनके लिए प्रतिवर्ष लगभग 250 लाख घरों की आवश्यकता होगी। प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951–56) काल में लगभग 980 लाख घरों की आवश्यकता का अनुमान लगाया गया था, लेकिन पूर्ति मात्र 130 लाख आवासों की ही हो पाई थी। इस तरह आगे आने वाले वर्षों में जनसंख्या वृद्धि के साथ–साथ आवास की पूर्ति में लगातार गिरावट देखी गई तथा चौथी पंचवर्षीय योजना काल में 837 लाख आवास घरों की कमी अनुमानित रही है। संसार में विभिन्न देशो में प्रति कमरे व्यक्तियों की संख्या निम्न है–

तालिका 3.1 प्रति कमरा औसत व्यक्ति

क्र.सं.	वर्ष	राष्ट्र	प्रति कमरा व्यक्ति
1	1967	कनाड़ा	0.7
2	1970	चीन	1.6
3	1968	फ्रांस	0.9
4	1968	जापान	1.1
5	1960	स्विट्जरलैण्ड	0.7
6	1966	इंग्लैण्ड	0.5
7	1970	अमेरिका	0.6
8	1960	रूस	1.5
9	1960	भारत	2.6

व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्र पर आवास समस्या का प्रभाव

आवास की समस्या से व्यक्ति समाज एवं राष्ट्र सभी प्रभावित होते हैं। कहा जाता है कि जो अपने आवास में सुखी नहीं है वह विश्व के किसी भी कोने में सुखी नहीं हो सकता है। व्यक्तियों की आवास सम्बंधी समस्या का जब तक समुचित हल नहीं किया जायेगा तब तक उसका व्यक्तिगत एवं पारिवारिक जीवन भी प्रभावित होता है। उसकी उत्पादक क्षमता भी प्रभावित होता है। आवास समस्या हल करने से व्यक्तियों का जीवन दबाव और तनावयुक्त रहता है अन्यथा उसका कार्य पर असर पड़ता है। अपराधों की वृद्धि का एक प्रमुख कारण व्यक्तियों की आवास समस्या का उचित हल न होना भी है। गन्दगी भी इसी कारण बढ़ती है। इसका अच्छा उदाहरण मुम्बई एवं अन्य महानगरों के झोपड़पट्टी में रहने वाले लोग है जो आपराधिक गतिविधियों को अंजाम देते हैं। पुलिस कई से कुख्यात अपराधियों को पकड़ा है। बड़े शहरों के आस–पासझोपडपट्टी में लाखों लोग रहते हैं तथा ये झोपडपट्टी अपराध, शराबखोरी और नशा, यौन अपराध, सट्टा सभी के बदनाम अड्डे बनकर रह गये है। ऐसे स्थानों में रहने वाले व्यक्ति प्रायः असामाजिक कार्यों में लिप्त रहते हैं और इनकी तरहइनकी संताने भी आगे चलकर इस तरह के कार्यों में अपने पिता का हाथ बटाती हैं। इससे पूरा समाज एवं राष्ट्र का अहित ही होता है। आवाज एक साफ सुथरी, हवादार जगह पर होना चाहिये जिसमें उचित प्रकाश एवं हवा की व्यवस्था होनी चाहिये। आवास शान्ति और सुकून प्रदान करता है। परन्तु जब हमारे देश के हजारो लाखों व्यक्ति फुटपाथों पर जीवन जी रहे हो या झोपड़पट्टी में गन्दगी, अपराध, तनाव, दबाव और कलंक में जी रहे हो तो पारिवारिक तथा राष्ट्रीय शान्ति की कल्पना कैसे की जा सकती है। हमे हर संभव प्रयास करने होंगे, जिससे देश की आवास समस्या का समुचित हल निकाला जा सके। ऐसा करके हम अपने देश में रहे अपराधों पर काफी हद तक नियंत्रण करने में सफल हो सकेंगे।

जनसंख्या वृद्धि तथा रोजगार

जनसंख्या वृद्धि तथा रोजगार में विलोमात्मक या विपरीत सम्बंध है। अर्थात् जैसे–जैसे जनसंख्या वृद्धि होगी वैसे–वैसे रोजगार में कमी देखने को मिलेगी। जनसंख्या वृद्धि बेरोजगारी को भी बढ़ाती है। इसको दूसरे नजरिये से भी देखा जा सकता है। जनसंख्या वृद्धि की अधिक दर समाज में कार्य करने वाले व्यक्तियों की संख्या में वृद्धि भी करती है। भारत में औद्योगिक तथा कृषि क्षेत्रों में काफी प्रगति की फिर भी इसकी दर अन्य विकसित देशों की तुलना में काफी कम है। यह विकास दर बढ़ती जनसंख्या में कार्य करने योग्य सभी व्यक्तियों को रोजगार एवं बढ़ी जनसंख्या को न्यूनतम खाद्यान्न उपलब्ध कराने में असमर्थ रहा है। विकसित देशों में तो 15 साल से कम आयु के बच्चों को कार्य नहीं करना पड़ता है परन्तु हमारे देश में तो लगभग 10 प्रतिशत बालक तथा 7 प्रतिशत बालिकाएँ कोई न कोई घरेलू या कृषि सम्बंधी कार्य करते देखा गया है। यह बालक दो बालिकाएँ कुछ उत्पादन करने में असमर्थ है परन्तु फिर भी इनको इन कार्यों में व्यस्त रखा जाता है। एक अध्ययन के मुताबिक भारत में कृषि कार्य में लगे व्यक्तियों की संख्या में 15 प्रतिशत कमी कर दिया जाये तो भी उत्पादन में कोई अन्तर देखने को नहीं मिलेगा। यह 15 प्रतिशत बालक या बालिकायें अपने परिजनों के साथ घर खेत या दुकानों में सहायता करती है। भारत में सन् 1971 की जनसंख्या के अनुसार 72 प्रतिशत व्यक्ति खेती से जुड़े थे जबकि अमेरिका में 4 प्रतिशत, इंग्लैण्ड में 3 प्रतिशत तथा अन्य विकसित राष्ट्रों में 20 प्रतिशत से

भी कम जनसंख्या खेती में संलग्न है। इसलिए हमारे यहाँ बेरोजगारी की दर हमेशा बढ़ती ही गई है। आजकल बेरोजगारी के आंकड़े तो सरकार ने देना बन्द कर दिया है। फिर भी भारत में बेरोजगारी की स्थिति अन्य देशों की तुलना में काफी विकराल स्थिति में है।

वर्तमान में भारत में लगभग 2.5 करोड़ व्यक्ति बेरोजगार है। राधाकृष्णन का अनुमान भी इसी के समकक्ष 2.5 करोड़ बेरोजगारी का है। इनमें से तो लगभग 1 करोड़ बिल्कुल ही बेरोजगार है तथा 1 करोड़ व्यक्ति अर्द्ध रोजगार है। इन बेरोजगार व्यक्तियों में 30 लाख शहरों में तथा 170 लाख गाँवों में रहते है। इनमें से 35 लाख तो हाईस्कूल परीक्षा पास है और 10 लाख व्यक्ति डिग्री प्राप्त तथा 20 हजार इंजीनियर है।

बेरोजगारी के कारण

बेरोजगारी का एकमात्र कारण जनसंख्या वृद्धि नहीं है यह एक प्रमुख कारण जरूर है। इसके अलावा जनसंख्या वृद्धि के कई कारण है जो निम्नलिखित है–

1. जनसंख्या वृद्धि।

2. औद्योगिक क्रांति।

3. कृषि में आवश्यकता से अधिक व्यक्तियों की संलग्नता एवं निर्भरता।

4. मौसमी बेरोजगारी।

5. दोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली।

6. धीमा आर्थिक विकास।

7. नियोजन में दोष।

8. निम्न उत्पादकता तथा क्षमता का अपूर्ण प्रयोग।

बेरोजगारी दूर करने के उपाय

भारत में बेरोजगारों की संख्या में लगातार इजाफा हो रहा है। बेरोजगारी दूर करने के लिए कुछ उपयोगी उपाय अपनाये जा सकते हैं। हम यह नहीं कहसकते कि इन उपायों से बेरोजगारी समाप्त हो जायेगी परन्तु काफी हद तक इस समस्या को काबू में किया जा सकता है। यह उपाय निम्नांकित है।

जनसंख्या वृद्धि

- औद्योगिक क्रान्ति।
- कृषि में आवश्यकता से अधिक व्यक्तियों की संलग्नता एवं निर्भरता।
- मौसमी बेरोजगारी।
- दोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली।

- धीमा आर्थिक विकास।
- नियोजन में दोष।
- निम्न उत्पादकता तथा क्षमता का अपूर्ण प्रयोग।

बेरोजगारी दूर करने के उपाय

भारत में बेरोजगारों की संख्या में लगातार इजाफा हो रहा है। बेरोजगारी दूर करने के लिए कुछ उपयोगी उपाय अपनायें जा सकते हैं। हम यह नहीं कह सकते कि इन उपायों से बेरोजगारी समाप्त हो जायेगी परन्तु काफी हद तक इस समस्या को काबू में किया जा सकता है। यह उपाय निम्नांकित हैं–

1. जनसंख्या वृद्धि पर प्रभावी नियंत्रण लगाना।

2. भारी तथा लघु उद्योगों की स्थापना करके उत्पादन में वृद्धि करके।

3. विनियोग ढाँचे में परिवर्तन करके।

4. भूमि सुधार कार्यक्रमों का क्रियान्वयन।

5. आधुनिकीकरण व स्वचालन पर नियंत्रण।

6. लघु व कुटीर उद्योगों का विकास।

7. ग्रामीण रोजगार परियोजनाओं का विस्तार।

8. बहु फसली कृषि को प्रोत्साहन।

9. शिक्षा को व्यावहारिक रूप देना।

10. पिछले तथा आदिवासी क्षेत्रों में रोजगार को बढ़ावा देने के उपाय सघन किये जाये।

जनसंख्या शिक्षा, जीवन की गुणवत्ता एवं जीवन स्तर

समय एवं परिस्थितियों की आवश्यकता के अनुसार ही मानव किसी निश्चित स्थान पर संगठित रूप में निवास करता है। इस संगठित एवं कथित समाज में व्यक्ति ने अपने जीविकोपार्जन के साधन बनाये तथा उत्तरोत्तर सहज एवं सुविधापूर्ण जीवन जीने की प्रत्यशा में आर्थिक व्यवस्था, राजनैतिक संगठन, नैतिक परम्परा और सौन्दर्य बोध को अधिक तीव्र करने की योजनाएँ बनायी। इन सभी के सम्मिलित प्रभावों को संस्कृति का नाम दिया गया। सभ्यता मानव के बाह्य या भौतिक उपलब्धियों से सम्बन्धित मानी जाती है, जबकि संस्कृति किसी प्रायोजन हेतु आन्तरिक आनन्द की अनुभूति होती है।

प्रसिद्ध दार्शनिक अरस्तु ने बढ़ती हुई जनसंख्या को जीवन की गुणवला पर कुप्रभाव डालती हैं, के बारे में कहा है कि श्यदि हमको अपना भविष्य सुरक्षित रखना है और संस्कृति एवं सभ्यता को अक्षुण्य बनाये रखना है तो देश की जनसंख्या को समिति और सुरक्षित रखना अति आवश्यक है।

जीवन की गुणवत्ता का अर्थ

जनसंख्या वृद्धि एवं जीवन की गुणवत्ता में अनन्य सम्बंध है। गुणवत्ता से आशय है कि व्यक्ति को ऐसी आवश्यकता सुख–सुविधाओं की उचित मात्रा में उपलब्धि जिससे वह अपना विकास ही न कर सके अपितु राष्ट्र के विकास में सक्रिय योगदान भी दे सके।

जीवन में गुणवत्ता से सम्बन्धित सुख सुविधाओं का निर्धारण करना सरल कार्य नहीं है। व्यक्ति के प्रत्येक क्षेत्र में उसकी पारिवारिकद्व सामाजिक, भौगोलिक, सांस्कृतिक तथा राजनैतिक भिन्नता पायी जाती हैं। परन्तु व्यक्ति की कुछ मूलभूत आवश्यकताएँ यथा– आहार, कपड़ा, आवास, स्वास्थ्य शिक्षा तथा आमोद–प्रमोद आदि ऐसी वस्तुएँ है जो जीवन की गुणवत्ता को प्रभावित ही नहीं करती वरन् समाज एवं राष्ट्र पर भी प्रत्यक्ष प्रभाव डालती है।

जीवन स्तर का अर्थ

जीवन–स्तर एक कठिन अवधारणा है क्योंकि इसका सम्बंध राष्ट्र के लोगों को भावात्मक जरूरतों, तथा सामाजिक आकांक्षाओं से होता है। प्रत्येक समाज की भावनात्मक आवश्यकताएँ और सामाजिक आकांक्षाएँ भी भिन्न–भिन्न होती है। अतः प्रत्येक समाज में जीवन स्तर का तात्पर्य भिन्न–भिन्न होता है।

जीवन स्तर का अर्थ भारत में कम परिश्रम करके कम आवश्यकताओं की पूर्ति करके आराम से रहना ही रहा है। आधुनिक विकसित राष्ट्र के समाजों में जीवन में सुख सुविधाओं का अधिकतम विकास जीवन स्तर से सम्बन्धित रहता है। वर्तमान में विकसित समाज में उच्च जीवन–स्तर का अर्थ है अच्छा भोजन, पहनने के लिए अच्छा कपड़ा, रहने के लिए अच्छा मकान, सोफा वातानुकूलित कमरे, मनोरंजन के आधुनिक साधनों का होना से लगाया जाता है।

जीवन स्तर का अर्थ समझने के लिए एक और तत्व है–स्थिर समाजजो अपने सभी सदस्यों का जीवन बहुत दीर्घकाल तथा अपने को या पर्यावरण को हानि पहुँचाये बिना सुखी और उत्तम बनाये रखता है। गोल्ड स्मिथ महोदय ने स्थिर और पुष्ट समाज के चार तत्व बताये हैं–

1. ऊर्जा, साधन तथा चीजों का अधिकतम एकत्रीकरण।

2. वानस्पतिक प्रक्रियाओं में कम से कम हानि।

3. ऐसी जनसंख्या जहाँ काम सभी को उपलब्ध हो।

4. ऐसी समाज व्यवस्था कि जहाँ ऊपर दर्शाई गयी तीनों दशकों में जीवन का आनन्द ले सके तथा बन्धन में रहे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जीवन स्तर के अन्तर्गत निम्न बातें आती हैं–

1. मानव की भौतिक आवश्यकताओं की संख्या एवं स्तर जैसे– भोजन, हवा, शुद्ध पानी घर इत्यादि।

2. मानव की सामाजिक एवं सांस्कृतिक आवश्यकताओं की संख्या तथा स्तर, यथा– रोजगार के अवसर, शिक्षा के अवसर स्वास्थ्य तथा डॉक्टरी परीक्षण, स्वतंत्रता मनोरंजन एवं विकास के अवसर आदि।

जीवन सुधार हेतु शासकीय प्रयास

स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त सरकार जनता के जीवन सुधार तथा जीवन स्तर को उच्च बनाने के लिए सतत् प्रयत्न कर रही है। पंचवर्षीय योजनाओं तथा बीस सूत्रीय कार्यक्रमों के माध्यम से समाजोत्थान के प्रयास भी लगातार किये जा रहे हैं। सरकार द्वारा किये जा रहे प्रयास सराहनीय है, जोइस प्रकार है–

1. आर्थिक विकास एवं जनसंख्या – आर्थिक विकास का अर्थ है कि समाज के अधिक से अधिक लोगो का उत्पादक कार्यो एंव अनेक गतिविधियो मे लगा रहना। सम्पूर्ण समाज के सकल उत्पादन में वृद्धि करना आर्थिक विकास का प्रमुख पहलू है। देश मे आवश्यकता से अधिक खाधान्न उत्पादन आर्थिक विकास कार्य को प्रदर्शित करता है। राष्ट्रीय आर्थिक उत्पादन को कुल राष्ट्रीय आय अथवा कुल उत्पादक के रूप में माना जाता है। देश मे एक वर्ष मे विभिन्न साधनो एवं सेवाओं से अर्जित घन ही कुल राष्ट्रीय आय के रूप मे बना रहता है। यदि हम कुल राष्ट्रीय आय को कुल जनसंख्या से विभाजित कर सकते है तो प्रति व्यक्ति की आय निकल आती हैं। लोगो की उत्पादक क्षमता का विकास अनेक प्रकार से किया जाता है। औद्योगिक क्षेत्र मे नयी मशीनो का प्रयोग, उत्तम तकनीकी शिक्षा उचित कार्य विधियो का उपयोग कर उत्पादन कार्य क्षमता बढायी जा सकता है।

प्राकृतिक साधनों तथा राष्ट्रीय सम्पत्ति का समान पूजी उत्पादन हेतु उपयोग, उन्नति निवेश कहलाता है। मजदूरों को श्रम की शिक्षा, स्वास्थ्य आदि के द्वारा उत्तम निवेश राष्ट्रीय आर्थिक विकास हेतु आवश्यक है। उत्पादन हेतु साघनो का एकत्रीकरण एवं निवेश के लिए धन की बचत करना राष्ट्रीय बचत कहलाती है।

राष्ट्रीय आय एवं जनसंख्या वृद्धि में घनिष्ट सम्बन्ध है। उदाहरणस्वरूप यदि जनसंख्या वृद्धि अधिक होती हैं। तो कुल राष्ट्रीय आय अधिक होने पर समाज लाभान्वित नही हो पाती हैं। आय कम होने के कारण बचत भी कम होती है। क्योकि आय की अधिक भाग आवश्यकताओ की पूर्ति करने मे ही खर्च हो जाता हैं। अतः आर्थिक उन्नति के लिए आवश्यक है। कि जनसंख्या वृद्धि कोकम किया जाये तथा राष्ट्रीय उत्पादन दर से यह कम रहे, इसका ध्यान कम किया जाये तथा राष्ट्रीय उत्पादन दर से यह कम रहे, इसका ध्यान रखाजाये।

2. सामाजिक विकास के प्रयास : विश्व के किसी भी देश के आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं सामाजिक परिवर्तन हेतु शहर अथवा नगर इसका आधार माने जाते हैं। जहाँ जीवन की सभी सुख सुविधाऐ प्रात्त होती है इसके कीमते बावजूद काफी ऊँची, हर तरफ व्यापक भीड़–भाड, अराजकता, एवं निजी क्षेत्र की अधिकता इसकी पहचान बनती जा रही है। जनसंख्या वृद्धि सदैव जनसंख्या घनत्व को बढाता है ग्रामीण व्यक्ति रोजगार,

शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन आदि के कारण शहर की ओर पलायन करने लगे हैं। कई पुराने गाँव आज बडे शहरो मे बदल गऐ है।. सामाजिक विकास से हमारा आशय व्याक्तियो का शहर अथवा ग्रामो मे वितरण, स्त्रियो का परिवार अथवा समाज मे स्थान बच्चो की शिक्षा एवं स्थिति, परिवार का आकार एकल अथवा सयुंक्त परिवार, जन्म–विवाह की उम्र, आवास इत्यादि से हैं। समाज का स्तर ऊँचा रखने के लिए स्त्री शिक्षा एवं उनकी स्थिति में सुधार करना होगा। भ्रूण हत्या बाल विवाह जैसी असामाजिक कृत्यो को दूर करना होगा। शिक्षा सभी को उपलब्ध करवाया जाना चाहिए वो भी निःशुल्क अथवा कम शुल्क में। शुल्क में शिक्षा ही एकमात्र ऐसा साधन है जिसके द्वारा हम रूढ़िवादी एवं परम्परावादी विचारों, छुआछूत को दूर कर सामाजिक उन्नति को प्राप्त कर सकते हैं।

3. स्वास्थ्य रक्षा और जनसंख्या नियंत्रण : 1947 के पश्चात् भारत सरकार ने कई स्वास्थ्य कार्यक्रमों का संचालन किया। इसी का परिणाम है कि कई घातक बिमारियाँ जैसे चेचक, मलेरिया, हैजा, प्लेग आदि लगभग समाप्त हो चुकी है। भारत सरकार ने डब्लू.एच. ओ. (विश्व स्वास्थ्य संगठन) की मदद से कई असाध्य बिमारियों, महामारियों पर नियंत्रण किया है। समाज में परिवार नियोजन के भी उपाय किये जा रहे हैं। सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं के द्वारा सफायी, मैला ढोने और फेकने की स्थिति, कचरा इकट्ठा करना और फेकना, शुद्ध पेयजल की व्यवस्था, कुपोषण से बचाव, रोग के समय यह पूर्व में चिकित्सा सेवा उपलब्ध करवाना, विद्यालयों में प्रत्येक माह सभी बच्चों के स्वास्थ्य की जाँच, टी.वी. सिनेमा, रेडियो, समाचार पत्र आदि के माध्यमों से स्वास्थ्य सम्बंधी ज्ञान एवं इसके प्राथमिक केन्द्रों के बारे में बताना।

स्वास्थ्य सेवाओं का सफल संचालन के लिए इसका ग्रामीण क्षेत्रों में वितरण आवश्यक है। अतः यदि राष्ट्र सेवा पर अधिक व्यय करता है और उसका वितरण ग्रामीण अंचलों में नहीं है तो लाभ नहीं होगा। वास्तव में आवश्यक है कि स्वास्थ्य सेवाएँ ग्रामीण अंचलों में भी फैले और वहाँ भी उपलब्ध रहें। सभी आयु वर्ग के व्यक्तियों के लिए भी स्वास्थ्य सेवाएँ उपलब्ध करायी जानी चाहिए– बच्चे, प्रौढ, स्त्रियों, असहाय आदि के लिए। सरकार ने इसके लिए सकारात्मक प्रयास कर रही है। गाँवों में प्राथमिक केन्द्रों की स्थापनाद्व जच्चा–बच्चा स्वास्थ्य कार्यक्रम की सुविधा सभी को प्रदान करने की व्यवस्था के प्रयास किये जा रहे हैं। ' परन्तु इतना सब होने पर भी भारत में स्वास्थ्य सेवाएँ कम ही है। प्रति डाक्टर जनसंख्या का मान भारत में बहुत कम है। प्रति डॉक्टर एक लाख से भी अधिक लोगों के स्वास्थ्य की जिम्मेदारी है। अस्पताल भी आवश्यकता से कम है। बैकॉक में एक डाक्टर 1000 जनसंख्या के लिए उपलब्ध है। उन्नत देशों में भी प्रति हजार डॉक्टरों की संख्या समुचित है, परन्तु अविकसित राष्ट्रों की स्थिति संतोषजनक नहीं है।

4. जनसंख्या शिक्षा द्वारा शैक्षिक उन्नति रू समाज में साक्षर व्यक्तियों की संख्या से शिक्षा का स्तर ज्ञात किया जाता है। इस तरीके से देश की शिक्षा कीप्रगति की सही जानकारी उपलब्ध नहीं हो पाती। विद्यालय छोड़ने अथवा अनुत्तीर्ण छात्रों की संख्या अधिक होने से शिक्षा के साधनों पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

आजादी के पश्चात् संविधान के निर्माण के समय यह संकल्प किया था कि 10 वर्षों के भीतर सभी बच्चों को उत्तम प्राथमिक शिक्षा 7 या 8 वर्ष की उपलब्ध करायी नायेगी, परन्तु अभी भी देश में सभी को 5 वर्ष की प्राथमिक शिक्षा भी उपलब्ध नहीं करायी जा सकी है।

शिक्षा के लोक व्यापीकरण के लिए शाला शिक्षक के अतिरिक्त पूरे राष्ट्र में औपचारिकेत्तर शिक्षा केन्द्र चलाये जा रहे हैं। जहाँ शाला न जा सकने वाले बच्चों को उनकी सुविधा के समय शिक्षा कीव्यवस्था की जाती है। इसमे समय भी कम लगता है तो भी लक्ष्य अभी बहुतदूर है। समाज में अशिक्षित प्रौढ़ो की संख्या भी काफी है।

सरकार शिक्षा की व्यवस्था के लिए शाखाएँ खोल रही है। अब प्राथमिक, स्तर की शिक्षा हर 300 आबादी वाले गाँव में उपलब्ध है। औपचारिकेत्तर केन्द्रों के माध्यम से शाला न जा सकने वाले बच्चों और युवकों को शिक्षा मिल जाती है। छात्रवृत्तियाँ, पाठ्य पुस्तके, पोशाक आदि उपलब्ध करा कर आर्थिक दृष्टि से कमजोर वर्ग के बच्चों को शिक्षा उपलब्ध करायी जा रही है। शिक्षा राज्य का प्रमुख कार्य है तथा इस पर अधिक से अधिक व्यय किया जा रहा है। शिक्षकों के प्रशिक्षण को उन्नत करने के लिए शिक्षण प्रशिक्षण उन्नत किया जा रहा है। शिक्षकों को पुनः प्रशिक्षित करने के लिए रिओरियन्टेशन की व्यवस्था की जाती है। सेमीनार संगोष्ठियों के माध्यम से इन्हें पुनरू प्रशिक्षित करना। एम. एड. एवं पी. –एच.डी. की व्यवस्था करना एवं शिक्षकों को इन कोर्सों के लिए प्रोत्साहित करना। उन्नत पुस्तकों का निर्माण करने के लिए पाठ्य पुस्तक निगमों की स्थापना करना। मूल्यांकन के सुधार के सतत् प्रयास भी किये जा रहे हैं।

पोषण

जीवन के स्वस्थ बनाये रखने तथा उत्तम शारीरिक एवं मानसिक विकास हेतु समुचित मात्रा एवं नियमित अंतराल में पोषण आति आवश्यक है। व्यक्ति के कम पोषण या कुपोषण में रहने से उस व्यक्ति विशेष की ही हानि नहीं होती बल्कि सम्पूर्ण देश इससे प्रभावित होता है। कम ताकत, कमजोर स्वास्थ्य तथा योग्यता का दुष्परिणम होता है कम आर्थिक विकास। यह एक स्वाभाविक परिणाम है। अतः इसे दूर करना अत्यंत आवश्यक है।

पोषण अर्थ एवं परिभाषा

सामान्य अर्थ में पोषण से तात्पर्य संतुलित भोजन से सम्बन्धित माना जाता है जो रीर को आवश्यक ऊर्जा प्रदान करता है। शरीर के संतुलित विकास सभी अंगों की क्रियाशीलता के लिए पोषण का अत्यंत महत्व है। पोषण के सम्बंध में टर्नर महोदय ने लिखा है कि ष्पोषण उन क्रियाओं का नियोजन है जिनके द्वारा जीवित प्राणी अपनी क्रियाशीलता को बनाये रखने के लिए तथा अंगों की वृद्धि एवं उनके पुनर्निर्माण हेतु आवश्यक पदार्थों को प्राप्त करता है और उसकाउपयोग करता है। इस परिभाषा पर अगर ध्यान दे तो पता चलेगा कि पोषण यथार्थ में एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें भोजन का पाचन होता है एवं इसमें निहित पोषक तत्वों का अभिशोषण शरीर के विभिन्न अंग ऊर्जा प्राप्ति हेतु करते हैं। यह लगातार चलने वाली प्रक्रिया है जब तक यह प्रक्रिया चल रही है शरीर को पोषण मिलता रहेगा। व्यक्ति स्वास्थ्य रहेगा, अगर यह प्रक्रिया रुकी या धीमी हुई व्यक्ति अपने आप अस्वस्थ्य होने लगेगा।

कुपोषण के कारण

पोषण की नियमित मात्रा नियमित अंतराल में ना मिलना ही कुपोषण कहलाता है। कुपोषण के कई कारण है। अध्ययन की सुविधा के दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए इन्हें दो मुख्य

भागों में बांटा गया है–(क) कुपोषण के सामान्य कारण (ख) कुपोषण के भोजन सम्बंधी कारण।

(क) कुपोषण के सामान्य कारण

कुपोषण भोजन के द्वारा ही नहीं होता। इसके अन्य कारण भी है, जिसके कारण कुपोषण की संभावना हो सकती है।

1. दूषित वातावरण : प्रायः यह देखने मे आता है कि शहर की तुलना मे गाँव के व्यक्ति ज्यादा स्वास्थ रहते। इसका प्रमुख कारण वातावरण है। गाँव में खुले घर, आँगन, खेत, नदियाँ, ताजी सब्जियों सभी कुछ उपलब्ध है। जो व्यक्ति को स्वस्थ्य रखते है। शहरों में कारखानों, गाड़ियों के धुएँ, उनके शोर, खुली जगहों का अभाव, छोटे एवं सीलन भरे बन्द मकान, शुद्ध वायु एवं जल का अभाव कुपोषण को बढ़ाने में मदद करते हैं। महानगरों की जिन्दगी में कुत्रिमता आती जा रही है।

2. अत्यधिक श्रम : शरीर की एक निश्चित क्षमता होती है, इससे अत्यधिक कार्य नहीं लिया जा सकता। कई बार व्यक्ति अपने शारीरिक क्षमता को नजर अंदाज करके लगातार ज्यादा शारीरिक श्रम करते हैं इससे कई बार शरीर की आंतरिक एवं बास्य क्षति होने लगती है। इससे भी व्यक्ति कुपोषण का शिकार बन जाता है।

3. रोगग्रस्तता : लम्बी बीमारी, घातक अथवा असाध्य बीमारी के कारण शरीर में दुर्बलता आती है तथा अशक्तता के कारण भोजन को पचाने में कोई कठिनाई होती है। रोग होने की स्थिति में कई बार व्यक्ति का मन भोजन करने में नहीं लगता कई बार वह सारा दिन भूखा रहता है या फिर सिर्फ हल्का–फुल्का खाना खाकर दिन गुजारता है। रोगग्रस्तता भी कुपोषण का मुख्य कारण है।

4. खेलकूद और व्यायाम की अवहेलना : खेलकूद और शारीरिक व्यायाम जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा है। हमें स्वास्थ्य रहने के लिए प्रतिदिन खेलने के साथ–साथ व्यायाम भी करना चाहिये। कई स्कूलो में हफ्ते में एक दिन सामूहिक रूप से योगा अथवा व्यायाम करवाया जाता है। बालक को प्रतिदिन खेलना चाहिए इससे शरीर सुडौल बनता है। साथ में शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता का विकास भी नहीं होता है। इससे कुपोषण की समस्या भी हल होती है।

5. अपर्याप्त निद्रा : भीड़–भाड़ सड़कों के किनारे, रेल्वे स्टेशन के पास, झुग्गी–झोपड़ी आदि के पास स्थित घरों में शोरगुल काफी रहता है। जिससे नींद नहीं आती और सारा दिन आलस्य में ही बीत जाता है। मानसिक चिन्ता, शारीरिक कार्य की कमी, थकान के अभाव के कारण भी व्यक्ति अनिद्रा की शिकार हो जाता है और उसका स्वास्थ्य धीरे–धीरे गिरने लगता है। यही आगे चलकर कुपोषण का शिकार बन जाता है। इसलिए कहा जाता है कि स्वास्थ्य रहने के लिए पर्याप्त नींद का लेना आवश्यक है।

(ख) कुपोषण केभोजन सम्बंधी कारण

कुपोषण असंतुलित भोजन अथवा अपर्याप्त भोजन के द्वारा भी होता है। कुपोषण के भोजन सम्बंधी कारण निम्नलिखित हैं–

1. पोषक तत्वों का अनुचित अनुपात : औसतन एक भारतीय 2300 कैलोरी प्रतिदिन लेता है। परन्तु लगभग एक तिहाई व्यक्तियों को भारत में 1700 कैलोरी, 40 प्रतिशत लोगों को 1700 से 3200 कैलोरी भोजन ही मिल पाता है। हमारे देश में शाकाहारी व्यक्तियों की संख्या अधिक है जो प्रोटीन और चर्बीयुक्त भोजन नहीं लेते इनके भोजन में कार्बोज ही अधिक रहता है। वयस्क पुरुष को 2800 कैलोरी, महिला को 2300 कैलोरी, गर्भवती महिला को 2700 कैलोरी, स्वास्थ्य बालक को 2000 कैलोरी, किसान को 3900 कैलोरी प्रतिदिन मिलना चाहिए। इसके अभाव में कुपोषण की संभावना बनी रहेगी।

2. अनियमित भोजन :भारत में ऐसे कई व्यक्ति मिल जायेंगे जो समय पर भोजन नहीं करते। या फिर बाहर की तली हुई चीजे खाकर सारा दिन बिताते हैं। कई बार बालकों के साथ पढ़ा–लिखा व्यक्ति भी साथ के काफी पहले या बाद में खाना खात है। इससे उसकी पाचन शक्ति क्षीण हो जाती है। रात को देर से या फिर ज्यादा खाना खाने से भी पेट के रोगों का एक कारण होता है। अनियमित भोजन आदत कुपोषण को बढ़ाती है।

3. अपर्याप्त भोजन : यूनाइटेड नेशन्स के सर्वेक्षण से यह स्पष्ट हुआ है कि भारत में सन् 1968–69 में प्रति व्यक्ति औसतन 1940 कैलोरी तथा सन् 1969–70 में 1990 था। इन 1990 कैलोरी में से 1354 कैलोरी अनाज आदि से तथा 6 प्रतिशत प्राणिज साधनों से प्राप्त होती थीद्व जबकि विकसित देशों में जैसे अमरिका में सन् 1970 के औसतन प्रति व्यक्ति 3000 कैलोरी में से अधीकांश भाग अण्डा, माँस, मछली, दूध आदि से तथा 652 कैलोरी अनाज आदि से प्राप्त होता है। सामान्यतः भारतीय भोजन में प्रोटीन 48 से 50 ग्राम ही होता है। जबकि अमेरिका में औसतन व्यक्ति 97 ग्राम प्रोटीन प्रतिदिन लेता है। इस समस्या का एकमात्र कारण अपर्याप्त या गलत भोजन चुनाव से है।

4. अनुचित भोजन रू कुपोषण का प्रमुख कारणों में से एक अनुचित भोजन से भी है आज की नई पीढ़ी घर के खानों से ज्यादा बाहर के मसालेदार, चटखारे खानों पर ज्यादा ध्यान देते हैं। बाहर की बनी वस्तुओं में मैदा औरबेसन का ज्यादा प्रयोग होता है जो पेट को हानि पहुँचाकर आतो सम्बंधी रोगोंको जन्म देते हैं। इसी प्रकार रात्रि का रखा हुआ भोजन और सड़े गले पदार्थ भी अपौष्टिक तथ्य हानिप्रद होते हैं इन्हें गर्म कर दुबारा खाने से बचना चाहिये।

कुपोषण दूर करने के उपाय

कुपोषण को दूर करने के लिए सभी को मिलकर प्रयास करने हेगि। विद्यालय, समाज, राष्ट्र, अध्यापक, समाजसेवी इस सब के प्रयास है। कुपोषण को दूर करने में सहायक होंगे। कुपोषण को दूर करने के उपाय निम्नलिखित हैं–

1. प्रचार, अखबार, टी.वी. के माध्यम से कुपोषण के कारणों एवं दूर करने के उपाय बताना।

2. गृहणियों को भोजन पकाने की सही विधियों से अवगत जिससे भोजन की पौष्टिकता नष्ट ना हो।

3. संतुलित भोजन के विषय में छात्रों के अभिभावकों से भी सम्पर्क स्थापित किया जाय। उन्हें बताया जाय कि भोजन में किन–किन पौष्टिक तत्वों को सम्मिलित करे तथा मैदा और बेसन की खाद्य वस्तुएं बालकों को खाने के लिए न दे।

4. विद्यालयों के मध्यान भोजन की व्यवस्था करनी चाहिए एवं यह सुनिश्चित करना चाहिये कि इन्हें मेन्यू के अनुसार समुचित मात्रा में दिया जा रहा है।

5. कक्षाओं में शिक्षकों के द्वारा छात्रों को संतुलित भोजन के बारे में बताना एवं उन्हें किन भोज्य पदार्थों से दूर रहना है इसकी सम्पूर्ण जानकारी देना।

6. विद्यालय में प्रत्येक माह डॉक्टरी निरीक्षण के द्वारा अपूर्ण पोषण से ग्रसित छात्रों को छाँट लिया जाय तथा इनके अभिभावकों को सूचित कर इनके नुकसान के बारे में बताना।

7. विद्यालयों में प्रत्येक माह या नियमित अंतराल में प्रत्येक बालक का वजन लिया जाये एवं उसका रिकार्ड रखा जाये। यदि दो बार भार में वृद्धि नहीं आये, तो समझ जाना चाहिए कि बालक अपूर्ण पोषण से ग्रसित है।

8. विद्यालय और घर के वातावरण को स्वास्थ्यप्रद बनाना जरूरी है। घर में स्वच्छ वायु, प्रकाश एवं साफ जल की व्यवस्था होनी चाहिये। घर में पर्याप्त खिड़की और रोशनदार होने चाहिए।

9. कुपोषण से ग्रस्त छात्रों को अत्यधिक मानसिक अथवा शारीरिक श्रम नहीं करवाना चाहिए। ऐसे छात्रों को डॉक्टरों की देखरेख में कुछ दिन रखना चाहिए।

10. कुपोषण पर सेमिनार, वाद–विवाद, निबन्ध लेखन, चर्चा आदि करवाना चाहिये जिससे इस पर लोग सोचने पर मजबूर हो जाये।

पर्यावरण

मनुष्य और पर्यावरण में गहरा सम्बंध है। सम्पूर्ण मानवीय विकास की प्रक्रिया प्रकृति की ही गोद में सम्पन्न होती है। मनुष्य की सम्पूर्ण आवश्यकताओं की पूर्ति उसके चारो ओर के वातावरण एवं परिवेश जिसे परिआवरण अर्थात् पर्यावरण कहते है, सम्पन्न होती है आज हम जिस दुनिया में रहते हैं वह एकदम बदल गई है। अब मनुष्य का जीवन पहले की तरह सुखद नहीं रहा है। उसके लिए यह जीवन नरक में बदल गया है। अनियोजित एवं अनियंत्रित जनसंख्या वृद्धि के लिए महान अर्थशास्त्री थॉमस राबर्ट माल्थस ने जो चेतावनी दी थी आज वह हमारे सामने अपने विकराल स्वरूप में खड़ी है। ''यदि बिना किसी नियंत्रण के जनसंख्या इसी प्रकार बढती गई तो खाद्यान्नों की कमी हो जायेगी।''

अतः खाद्यान्नों के उत्पादन को बढ़ाने के लिए कई कार्यक्रम प्रारम्भ करने पड़ेगे इससे अर्थव्यवस्था के अन्य विभागों को दाँव पर लगाना पड़ेगा। फलतः जनसंख्या वृद्धि कई विपत्तियों का कारण बन जायेगी।

पर्यावरण तथा औद्योगिक विकास

स्पष्ट प्रभाव भारत में जैसे–जैसे औद्योगिक विकास होता गया उसका पर्यावरण पर दिखाई पड़ने लगा। औद्योगीकरण का पर्यावरण पर कितना प्रभाव पड़ता है इसका ज्ञान हमें दामोदर वेली, भाखड़ा नगल बाँध, औद्योगिक शहर जैसे–मुम्बई, कलकत्ता, अहमदाबाद या इसके आस–पास के क्षेत्रों को देखने सेस्पष्ट हो जाता है। इन शहरों या क्षेत्रों के कूड़ा–कर्कट तथा मैला को बहाने या नष्ट करने की बड़ी समस्या रहती है। औद्योगिक क्षेत्रों में कूड़ा–कर्कट को नष्ट करने का व्यय अधिक रहता है। इन क्षेत्रों में पानी की भी आवश्यकता बहुत अधिक रहती हैद्ध विशेषकर लोहा, कागज, कपड़ा बनाने के कारखानों के लिए पानी बहुत आवश्यक रहता है। इन कारखानों से निकला गन्दा पानी नदी–नालों, तालाबों या पोखरों में मिलकर उस पानी को भी दूषित करता है। इससे स्वच्छ पीने के पानी की भी दिक्कत पैदा होने लगी है।

मेट्रो शहरों में यात्रा तथा माल ढोने के लिए बसो, मोटरों, ट्रकों आदि का उपयोग अधिक होता है। अधिक घनी बस्ती होने से कोयले के जलने या आग के जलने से अधिक दूषित वायु वायुमण्डल के इस प्रदूषण तथा इससे होने वाली हानि की गणना काफी कठिन है। कहने का आशय यह है कि औद्योगीकरण तथा शहरीकरण का गहन प्रभाव पर्यावरण पर पड़ता है।

पर्यावरण और स्वास्थ्य

पर्यावरण और स्वास्थ्य में घनिष्ठ सम्बंध है। गाँव एवं शहरों में जब तक आबादी कम थी कम पानी में ही काम चल जाता था जैसे–जैसे आबादी या जनसंख्या बढ़ी पानी की आवश्यकता बढ़ती गई। इन बढ़ी हुई जनसंख्या के इन्हीं कुँओं का उपयोग से पानी के द्वारा संक्रामक रोग के किटाणुओं से रोगों के फैलने का खतरा बहुत अधिक रहता है। डब्लू.एच.ओ. ने सन् 1960 में अनेक कुओं के पानी का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि इन पानी में संक्रमक रोगों के कीटाणुओं की मात्रा काफी बढ़ी हुई है। यह पानी लेने के स्थानों या कुँओं में अशु, बर्तनों के उपयोग तथा कुँओं के आस–पास मैला, कूड़ा कर्कट आदि डालने से हो जाता है। इससे प्रदूषण बढ़ता है तथा स्वास्थ्य के लिए खतरे भी बढ़ने रहते हैं।

गाँवों में स्वास्थ्य तथा सफाई आदि सम्बंधी बातों की व्यवस्था करना अधिक कठिन इसलिए भी होता है कि वहाँ गरीबी रहती है। गरीबी के कारण रहन–सहन तथा खाना पीना बहुत पोषक नहीं होता है। इससे कमजोरी बढ़ती है। बीमारी के कारण काम के दिन और घण्टे कम होते रहते हैं। जिससे गरीबी सेउबरना कठिन रहता है। फलतः इनकी उत्पादन क्षमता कम होती जाती है। इससे यह स्पष्ट है कि जनसंख्या वृद्धि का गाँव या शहर के जीवन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इससे पर्यावरण दूषित होता है तथा स्वास्थ्य वर्धक स्थितियों में न्यूनता आती है।

पर्यावरण और शिक्षा

शिक्षा से सुनियोजित विकास सम्भव है। मानवीय साधनों तथा भौतिक साधनों के समुचित होने से शिक्षा के द्वारा जीवन सुखी और सम्पन्न बनाया जा सकता है। वर्तमान में भारत में कृषि तकनीक में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए है। यह रेडियो, टी.वी. समाचार पत्र, कृषि विश्वविद्यालय विस्तार सेवा, कृषि विभाग आदि के सम्मिलित प्रभावों के कारण सम्भव हुआ

है। किसानों को नवीन तकनीकों तक साधनों का ज्ञान कराया जाता है तथा वे इन्हें अपनाकर कृषि के क्षेत्र में क्रान्ति ला रहे हैं। यह शिक्षा के द्वारा समाज परिवर्तन तथा विकास का उत्तम उदाहरण है। यह भी देखने में आया है कि जो किसान थोड़ी बहुत शिक्षा प्राप्त कि है वे नई तकनीक तथा प्रयोग को जल्द अपना लेते हैं। इसका प्रभाव' शहरों की ओर भागने की प्रवृत्ति पर भी पड़ा है। लोग अब गाँव में रहकर उन्नति करना चाहते हैं। पहले दे शहरों में बसने को ही उन्नति का एक मात्र उपाय समझते थे। प्रौढ़ शिक्षा, अनौपचारिक शिक्षा, शाला शिक्षा इस प्रकार जीवन को सुखी बनाने, जीवनस्तर सुधारने तथा पर्यावरण को उन्नत बनाने में सहायक होती है।

पर्यावरणीय सुरक्षा की ओर भारत के बढ़ते कदम

प्रकृति में यह गुण है कि वह वनस्पतियों एवं जीव–जन्तुओं को संतुलित स्थिति में बनाये रखने में सक्षम है, परन्तु मनुष्य स्वार्थवश उन प्राकृतिक घटकों का दोहन करता है। अनेक वर्षों से की जा रही इन विनाशपूर्ण लीला के कारण अन्य जीवों के साथ–साथ मनुष्य ने अपने जीवन के अस्तित्व को भी खतरे में डाल दिया है। इस बात में कोई संदेह नहीं रह गया है कि जीव–जन्तुओं और प्रकृति के संसाधनों के अंधाधुंध प्रयोग ने वर्तमान पीढ़ी केसामने एक चुनौती भरा प्रश्न रख दिया है। इस दिशा में 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस मनाया जाता है तथा यह यथासम्भव प्रयास भी किया जा रहा है कि विश्व को इस विनाश लीला से बचने के उपायों से अवगत कराया जाये।

1. भारत में पर्यावरण सम्बंधी लगभग 200 कानून है। पर्यावरण सम्बंधी सन् 1853 में बनाया गया। इसका पहला कानून श्शोरश एक्ट था। सन् 1976 में संविधान में 42वें संशोधन के अन्तर्गत पर्यावरण सम्बंधी मुद्दे शामिल किये गये।

2. राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों में अनुच्छेद 48 अ जोड़ा गया और कहा गया कि "राज्य देश के प्राकृतिक पर्यावरण एवं वनों व वन्य जीवों की सुरक्षा तथा विकास के उपाय करेगा।''

3. जोड़े गये मौलिक कर्तव्यों के अध्याय के अनुच्छेद 51अ (जी) में कहा गया कि ''वनों, झीलों, नदियों और वन्य जीवन की सुरक्षा व विकास सभी जीवों के प्रति सहानुभूति प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य होगा।'' वनों और वन्य जीवन में जुड़े मसले राज्य सूची से समवर्ती सूची में कर दिये गये।

पर्यावरण संरक्षण से सम्बन्धित प्रमुख फैलोशिप तथा पुरस्कार

इंदिरा गाँधी पर्यावरण पुरस्कार :इंदिरा गाँधी पर्यावरण पुरस्कार की स्थापना 1987 में की गई थी। यह पुरस्कार पर्यावरण के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान करने वाले संगठन या व्यक्ति को हर वर्ष दिया जाता है। इसके अन्तर्गत एक लाख रुपये नकद एक रजत ट्राफी और प्रशस्ति पत्र दिया जाता है।

इंदिरा प्रिय दर्शनी वृक्षमित्र पुरस्कार : इंदिरा प्रियदर्शिनी पुरस्कार 1986 में पर्यावरण और वन मंत्रालय ने प्रारम्भ किया। वनीकरण तथा परती भूमि के विकास के क्षेत्र में उत्कृष्ट योगदान करने वाले व्यक्तियों तथा संगठनों को ये पुरस्कार दिये जाते हैं। हर वर्ष दस

पुरस्कार व्यक्तियों, शिक्षा, संस्थाओं, पंचायतों, स्वयं सेवी एजेंसियों तथा सरकारी एजेंसियों को दिये जाते हैं। प्रत्येक पुरस्कार में पदक, प्रशस्ति पत्र और पचास हजार रुपये नकद दिये जाते हैं।

महावृक्ष पुरस्कार

1993–94 में शुरू किया गया यह पुरस्कार विशिष्ट प्रजातियों के पेड़ लगाने वाले व्यक्तियों तथा संगठनों को पेड़ों के सर्वाधिक विकास, ऊँचाई, शक्ति तथा अच्छी स्थिति के लिए हर साल दिया जाता है। इसमें 25000 रुपये, पट्टिका और प्रशस्ति पत्र दिया जाता है।

राष्ट्रीय प्रदूषण रोकथाम एवं नियंत्रण पुरस्कार

1991 से पर्यावरण प्रदूषण की रोकथाम एवं नियंत्रण में योगदान करने वाले उद्योगों को प्रत्येक वर्ष राष्ट्रीय पुरस्कार प्रदान किये जा रहे हैं।

स्वच्छ प्रौद्योगिकी के लिए राजीव गाँधी पर्यावरण पुरस्कार

1993 मे शुरू किया गया यह पुरस्कार उन औद्योगिक इकाइयों को दिया जाता है, जिन्होंने स्वच्छ प्रोद्योगिकियों के विकास में महत्वपूर्ण योगदान किया है और औद्योगिक कार्यों द्वारा पैदा हुई पर्यावरण समस्याओं के लिए नूतन समाधान उपलब्ध कराये है।

पर्यावरण एवं वन मंत्रालय विशिष्ट वैज्ञानिक पुरस्कार

पर्यावरण तथा वन मंत्रालय और उसके सहयोगी कार्यालयों तथा स्वायत्त संस्थाओं के वर्ग श्कश वैज्ञानिकों में मौलिक तथा व्यावहारिक अनुसंधान को प्रोत्साहन देने के लिए वर्ष 1992–93 में पर्यावरण एवं वन मंत्रालय विशिष्ट वैज्ञानिक पुरस्कार की स्थापना की गई। इस योजना के अन्तर्गत प्रतिवर्ष 20–20 हजार रुपये के दो पुरस्कार दिये जाते हैं।

पीताम्बर पंत राष्ट्रीय पर्यावरण फैलोशिप पुरस्कार

1978 में शुरू किया गया यह वार्षिक पुरस्कार पर्यावरण विज्ञान से सम्बद्ध अनुसंधान की किसी भी शाखा में उत्कृष्टता को मान्यता देने, प्रोत्साहन देने और समर्थन देने के लिए दिया जाता है।

मरुभूमि पर्यावरण फैलोशिप

प्रकृति संरक्षण के प्रति विश्नोई समुदाय के योगदान को मान्यता देने और मरुभूमि पर्यावरण के बारे में अध्ययन को प्रोत्साहन देने के लिए मंत्रालय ने जोधपुर विश्वविद्यालय में मरुभूमि पर्यावरण फैलोशिप शुरू की है।

सारांश

जनसंख्या वृद्धि तथा आर्थिक विकास

जनसंख्या वृद्धि तथा आर्थिक विकास एक सिक्के के दो पहलू है। जनसंख्या वृद्धि आर्थिक विकास के लिए मानव संसाधन उपलब्ध कराते है। कई अर्थशास्त्रियों के अनुसार जनसंख्या वृद्धि आर्थिक विकास के सकारात्मक तो कभी–कभी नकारात्मक भूमिका भी निभाती है।

जनसंख्या वृद्धि आर्थिक विकास में सहायक

जनसंख्या वृद्धि से कई उद्योगों, उत्पादों के लिए मानव उपलब्ध कराता है। माँग में वृद्धि के साथ–साथ टैक्स, आयकर के लिए भी जनसंख्या वृद्धि आवश्यक है।

जनसंख्या वृद्धि आर्थिक विकास में बाधक

अत्यधिक जनसंख्या वृद्धि आर्थिक विकास में बाधक सिद्ध होती है। जनसंख्या वृद्धि से – 1. प्रति व्यक्ति कम भोजन उपलब्ध, 2. प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि नहीं, 3. राष्ट्रीय आय का अधिकांश भाग सामाजिक सेवा में व्यय, 4. बचत में कमी

राष्ट्रीय आय

भारत में राष्ट्रीय जी. एन. पी. लगभग 98000 करोड़ तथा एन. एन. पी 18000 करोड़ रुपये है। सन् 1970–71 के मूल्यों पर यह लगभग 46000 करोड़ रुपये के बराबर होता है। भारत में राष्ट्रीय आय 53 प्रतिशत के हिसाब से बढ़ी है। जबकि जनसंख्या वृद्धि पर 2.5 प्रतिशत रही है।

प्रति व्यक्ति आय

भारत में प्रति व्यक्ति आय 1948–49 में लगभग 250 रुपये प्रतिवर्ष थी। सन् 1976 के मूल्यों में यह 1976 में बढ़कर 1005 रुपय 1960–61 के मूल्यों पर 366 रुपया ही थी। सन् 1981 के मूल्य 1947–48 की तुलना में लगभग 5 गुने अधिक ही देखने को मिले है।

जनसंख्या वृद्धि एवं उत्पादन

जनसंख्या वृद्धि दुगनी गति2,4,8, 16,... से बढ़ती है, जबकिखाद्यान्नउत्पादन 2, 4, 6, 8..... की दर से बढ़ता है। वर्ष 2001–02 में खाद्यान्न उत्पादन प्रति हेक्टेयर 1734 मिलियन हेक्टेयर, दालें– 607 मिलियन हेक्टेयर, चावल 2079 मिलियन हेक्टेयर था जो 2006–2007 में बढ़कर क्रमशः 1750 मिलियन हेक्टेयर, 616 मिलियन हेक्टेयर, 2127 मिलियन हेक्टेयर हो गया।

औद्योगिक उत्पादन में भी हमने वृद्धि की। इस्पात में 5गुना, औद्योगिक उत्पादन 3) गुना, बिजली 5 गुना, ऐल्युमीनियम 52 गुना, कास्टिक सोड़ा 121 गुना हुआ है।

जनसंख्या वृद्धि एवं आवास समस्या

सन् 1971 की जनसंख्या के अनुसार 70 प्रतिशत व्यक्ति एक कमरे में पूरे परिवार के साथ रहते हैं। बड़े शहरों दिल्ली, मद्रास, चेन्नई, बेंगलूरू में 60 प्रतिशत से 70 प्रतिशत जनसंख्या एक कमरे में रहती है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में लगभग 980 लाख घरों की आवश्यकता थी जबकि 130 लाख आवास की व्यवस्था हो पाई।

जनसंख्या वृद्धि तथा रोजगार वर्तमान में देश में 2.5 करोड़ व्यक्ति बेरोजगार थे। इन बेरोजगार व्यक्तियों में 30 लाख शहरों में तथा 170 लाख गाँवों में रहते हैं। इनमें से 35 लाख हाईस्कूल पास, 10 लाख डिग्रीधारी तथा 20 हजार इंजीनियर हैं।

बेरोजगारी के कारण

1. जनसंख्या वृद्धि

2. औद्योगिक क्रान्ति

3. दोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली

4. मौसमी बेरोजगारी

5. धीमा आर्थिक विकास,

6. नियोजन में दोष

7. निम्न उत्पादकता

बेरोजगारी दूर करने के उपाय

1. जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण।

2. भारी तथा लघु उद्योगों की स्थापना।

3. विनियोग ढाँच में परिवर्तन।

4. भूमि सुधार कार्यक्रमों का क्रियान्वयन।

5. आधुनिकीकरण पर नियंत्रण।

6. बहु फसली कृषि को प्रोत्साहना।

7. लघु व कुटीर उद्योगों का विकास।

जीवन गुणवत्ता एवं जीवन स्तर

जनसंख्या वृद्धि एवं जीवन की गुणवत्ता में अन्य सम्बंध है। गुणवत्ता से आशय है कि व्यक्ति को ऐसी आवश्यकता सुख–सुविधाओं की उचित मात्रा में उपलब्धि जिससे वह अपना विकास ही न कर सके अपितु राष्ट्र के विकास में सक्रिय योगदान भी दे सके।

जीवन सुधार हेतु शासकीय प्रयास

1. आर्थिक विकास एवं जनसंख्या

2. सामाजिक विकास के प्रयास

3. स्वास्थ्य रक्षा और जनसंख्या नियंत्रण

4. जनसंख्या शिक्षा द्वारा शैक्षिक उन्नति

पोषण

सामान्य अर्थ में पोषण से तात्पर्य संतुलित भोजन से सम्बन्धित माना जाता है जो शरीर को आवश्यक ऊर्जा प्रदान करता है। शरीर के संतुलित विकास सभी अंगों की क्रियाशीलता के लिए पोषण का अत्यंत महत्व है।

कुपोषण के कारण

(क) कुपोषण के सामान्य कारण

1. दूषित वातावरण
2. अत्यधिक श्रम
3. रोगग्रस्तता
4. अपर्याप्त निद्रा

(ख) कुपोषण के भोजन सम्बंधी कारण

- पोषक तत्वों का अनुचित अनुपात
- अनियमित भोजन
- अपर्याप्त भोजन
- अनुचित भोजन

कुपोषण दूर करने के उपाय

- प्रचार के माध्यम से जनता को कुपोषण के कारण एवं दूर करने के उपाय को बताना।
- गृहणियों को भोजन पकाने की सही विधियों का ज्ञान कराना।
- संतुलित भोजन के विषय में छात्रों को बताना।
- विद्यालय में मध्यान भोजन की व्यवस्था करना।
- विद्यालयों में प्रति माह डॉक्टरी परीक्षण।
- कुपोषण पर सेमिनार, वाद–विवाद, निबन्ध का आयोजन करवाना।

पर्यावरण

परि़आवरण यह एक पुरानी धारणा है। अब पर्यावरण को परिभाषित करने के कई अवधारणाओं का विकास किया गया है जो इसके समस्त पहलुओं की व्याख्या करता है। इसके अन्य अवयव हैं– 1. पर्यावरण तथा औद्योगिक विकास, 2. पर्यावरण और स्वास्थ्य, 3. पर्यावरण और शिक्षा।

पर्यावरण में सम्बन्धित पुरस्कार एवं फैलोशिप

- इंदिरा गाँधी पर्यावरण पुरस्कार।
- इन्दिरा प्रियदर्शिनी वृक्ष मित्र पुरस्कार।
- महावृक्ष पुरस्कार।
- राष्ट्रीय प्रदूषण रोकथाम एवं नियंत्रण पुरस्कार।
- स्वच्छ प्रौद्योगिकी हेतु राजीव गाँधी पर्यावरण पुरस्कार।
- विशिष्ट वैज्ञानिक पुरस्कार।
- मरुभूमि पर्यावरण फैलोशिप।
- पीताम्बर पंत राष्ट्रीय पर्यावरण फैलोशिप पुरस्कार।

अभ्यास प्रश्न

1. जनसंख्या और शिक्षा से सम्बंध स्पष्ट करे?

2. भारत में जीवन स्तर उच्च बनाने की दिशा जनसंख्या सम्बंधी क्या समस्या है?

3. कुपोषण का शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ता है?

4. पोषण से आप क्या समझते हैं? कुपोषण के मुख्य कारणों को स्पष्ट करते हुए कुपोषण को दूर करने के उपायो का वर्णन कीजिये।

5. पर्यावरण तथा औद्योगिक विकास का सम्बंध स्पष्ट कीजिये।

6. पर्यावरण के क्षेत्र में दिये जाने वाले विभिन्न पुरस्कार एवं फैलोशिप की चर्चा करे।

UNIT-IV : FAMILY LIFE EDUCATION

- Concept of Family
- Family role and responsibilities
- Family needs and resources
- Responsible parenthood life values and beliefs

भारत तथा अन्य अविकसित देशों में जनसंख्या वृद्धि में तीव्रता द्वितीय विश्वयुद्ध की अवधि के पश्चात् हुई है। आर्थिक विकास की दृष्टि से महत्वपूर्ण उपलब्धि की भाँति जनसंख्या में भी वृद्धि हुई है। विकसित देशो मे प्रति व्यक्ति आय, राष्ट्रीय कल्याण के उपाय अधिक प्रबल एवं सतोषजनक है। विकासशील देशो मे तीव्र जनसंख्या वृद्धि दर मुख्य समस्या है। तथा वर्तमान वर्षो में यह और अधिक हो गई। विश्व के अनेक विकासशील देशो मे जिसमे भारत भी सम्मिलित है. जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करने हेतु परिवार नियोजन कार्यक्रम को विकास योजना मे महव्वपूर्ण स्थान दिया गया है तथा जनसंख्या वृद्धि दर कम करने के लिए अपनाया गया है। यद्यपि भारत में परिवार नियोजन कार्यक्रम सम्बंधी साहित्य पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। स्वाकारकर्ताओं के अपनाने वाले के प्रतिरूप का विशेष अध्ययन, परिवार नियोजन कार्यक्रम की क्षेत्रीय नीति के विकास की आवश्यकता का अभाव है। परिवार नियोजन के अभ्यास को अपनाना तथा स्तर जैसे प्रति व्यक्ति आयद्व आर्थिक सामाजिक सुधार तथा विकास का नगरीकरण, साक्षरता, गैर कृषि कार्यशील, स्त्री कार्यशीलता तथा साक्षरता तथा स्त्रियों में साक्षरता के मध्य समझने के लिए पर्याप्त नहीं है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है वह समाज में रहकर ही अपना एवं समाज का विकास करता है। परिवार समाज की एक प्रमुख संस्था है जिसका अस्तित्व आज से ही नहीं प्राचीनकाल से ही रहा है। प्राणिशास्त्रीय सम्बंधों के आधार पर बने समूहों में परिवार सबसे छोटी इकाई है। अनेक समाजशास्त्रियों का मत है कि परिवार समाज रूपी भवन के कोने का पत्थर है। यह सामाजिक संगठन की इकाई है। परिवार के अभाव में मानव और समाज के अस्तित्व एवं उसकेसंचालन की कल्पना भी करना कठिन प्रतीत होता है। मानव प्राचीन काल से ही किसी न किसी परिवार, समाज या समुदाय का सदस्य रहा है या है। समाज में कई संस्था इकाई और कई परिवर्तनशील है। परिवार समाज की एक स्थाई संस्था है जिस पर सभी देशवासियों का सम्पूर्ण विश्वास है। ऐसा माना जाता है कि मानव की समाप्त सामाजिक संस्थाओं में परिवार एक आधारभूत और सर्वव्यापी सामाजिक संस्था है। संस्कृति के सभी स्तरों में चाहे उन्हें उन्नत कहा जाय या निम्न किसी न किसी प्रकार का पारिवारिक संगठन अनिवार्यतः पाया जाता है। शारीरिक, मानिसक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक आवश्यकताओं एवं कामवासनाओं की पूर्ति ने ही परिवार को जन्म दिया। परिवार ही नवजात शिशुओं, गर्भवती महिलाओं, अपंग एवं मानसिक रोगी, असहाय वृद्ध व्यक्तियों की देखभाल करता है। यौन सम्बंधों एवं संतानोत्पत्ति का नियमन कर उन्हें सामाजिक मान्यता प्रदान करता है। यही कारण मानव को जानवरों से अलग करती है। परिवार के द्वारा उनमें रहने वाले सदस्यों के मध्य भावनात्मक घनिष्टता एवं विश्वास का वातावरण प्रदान करता है, बचे के समुचित लालन—पालन, सामाजीकरण और शिक्षण में योग देता है। यही नहीं, बल्कि परिवार अपने सदस्यों की सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक,

राजनीतिक एवं सांस्कृतिक आवश्यकताओं की पूर्ति में भी योग देता है। परिवार मानव जाति के आत्म—सरंक्षण, वंशवर्धन और जातीय जीवन की निरन्तरता बनाये रखने का प्रमुख साधन है। मनुष्य मरणशील है एक ना एक दिन मनुष्य की मृत्यु निश्चित है, लेकिन सम्पूर्ण मानव जाति अमर है। मानव में हमेशा से मृत्यु पर विजय प्राप्त करने की इच्छा रही है। प्राचीन काल से कई राजाओं, साधु—संतद्व दानवों ने कई प्रयास किये अमरत्व प्राप्त करने के लिए परन्तु सफलता हाथ न लगी। अमरत्व के लिए प्राचीनकाल में अनेक उपाय किये, जड़ी—बूटियां ढूंढी रसायन और अमृत की खोज की, कई वर्षों तक तपस्या एवं अराधना कि इसके साथ अनेक परीक्षण भी किये। इतने प्रयासों के पश्चात् भी वह परिवार के अतिरिक्त अन्य कोई विकल्प नहीं खोज पाये। विवाह द्वारा परिवार निर्माण कर संतानोंके माध्यम से व्यक्ति का विस्तार होता है और वह मरकर भी अमर रहता है। मनुश्य को एक तरफ अपनी मृत्यु का दुःख है तोदूसरी तरफ उसे यह भी संतोष है कि वह परिवार द्वारा अपने वंशजों के रूप में अनन्त काल तक जीवित रहेगा। हमारे जीवन में जो कुछ भी सुन्दरता है, परिवार ने उसकी सुरक्षा की है, उसी ने मानव को सांस्कृतिक समृद्धि प्रदान की है। स्त्री और पुरुष दोनो ही परिवार के मूल आधार है, रथ के दो पहिये कके समान है, जिनके बीच जीवन रूपी धारा का लगातार प्रवाह हो रहा है। परिवार समाज में अपना अस्तित्व हमेशा से बनाये हुये है। परिवार में कोई व्यक्ति मृत्यु की ओर अग्रसर होता है तो कोई नया मेहमान भी परिवार में आकर उस सूनेपन को भरता है। जन्म और मृत्यु भी परिवार को कभी—भी प्रभावित नहीं कर पाई है। मैलिनोवस्की कहते हैं कि ''परिवार ही एक ऐसा समूह है जिसे मनुष्य पशु अवस्था में अपने साथ लाया है।'' भर्डॉक ने 250 आदिम परिवारों का अध्ययन करने पर पाया कि कोई भी समाज ऐसा नहीं था जिसमें परिवार रूपी संस्था की अनुपस्थिति हो।

परिवार का अर्थ एवं परिभाषा

अंग्रेजी के Family शब्द का हिन्दी रूपान्तरण परिवार है। थ्ंउपसल शब्द का उद्गम लैटिन शब्द थ्ंउनसने से हुआ जो एक ऐसे, समूह के लिए प्रयुक्त हुआ है जिसमें माता—पिता, बच्चे, नौकर और दास है। साधारण अर्थों में परिवार से तात्पर्य विवाहित जोड़े से लगाया जाता था, किन्तु समाजशास्त्रीय व्याख्या के अनुसार यह परिवार शब्द का सही उपयोग नहीं है। परिवार में पति—पत्नी के इनमें से किसी भी एक के अभाव में साथ—साथ बच्चों का होना आवश्यक है। हम उसे परिवार न कहकर गृहस्थ कहेंगे। यह सम्भव है कि परिवार एवं गृहस्थ के सदस्य एक ही हो। प्रत्येक परिवार एक गृहस्थ भी है, किन्तु सभी गृहस्थ परिवार नहीं है। परिवार की परिभाषाओं से यह बात और यह भी स्पष्ट हो जायेगी। विभिन्न विद्वानों ने परिवार को इस प्रकार परिभाषित किया है। निश्चित यौन सम्बंध द्वारा परिभाषित एक ऐसा समूह है ''परिवार पर्याप्त जो बच्चों के जनन एवं लालन—पालन की व्यवस्था करता है।''— मैकाइवर एवं पेज।

''परिवार में स्त्री और पुरुष दोनों को सदस्यता प्राप्त रहती है, उनमें से कम से कम दो विपरीत यौन व्यक्तियों को यौन सम्बंधों की सामाजिक स्वीकृति रहती है और उनके संसर्ग से उत्पन्न सन्तान मिलकर परिवार का निर्माण करते है।''—डॉ. दुबे।

''परिवार एक ऐसा सामाजिक समूह है जिसके लक्षण सामान्य निवासद्व आर्थिक सहयोग और जनन है। इनमें दो लिंगों के बालिक शामिल है जिनमें कम से कम दो व्यक्तियों में

स्वीकृत यौन सम्बंध होता है और जिन बालिक व्यक्तियों में यौन सम्बंध होता है उनके अपने या गोद लिये हुए एक या अधिक बच्चे होते है।''–भरडॉक।

''परिवार एक गार्हस्थ्य समूह है जिसमें माता–पिता और संतान साथ–साथ रहते हैं। इसके मूल रूप में दम्पत्ति और उसकी संतान रहती है।'' –लूसी मेयर।

उपुर्यक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि विभिन्न विद्वानों ने परिवार को विभिन्न दृष्टिकोणसे परिभाषित किया है। परिवार एक समूह, एक संघ और एक संस्था के रूप में समाज में विद्यमान है। प्रत्येक समाज में परिवार के दो पक्ष स्पष्ट होते हैं एक संरचनात्मक एवं दूसरा प्रकार्यात्मका अपने मूल रूप में परिवार की संरचना पति–पत्नी और बच्चों से मिलकर बनी होती हैं। इस दृष्टि से प्रत्येक परिवार में कम से कम तीन प्रकार के सम्बंध विद्यमान होते हैं–

1. पति–पत्नी के सम्बंध।

2. माता–पिता एवं बच्चों के सम्बंध

3. भाई–बहन के सम्बंध

प्रथम प्रकार का सम्बंध वैवाहिक सम्बंध होता है जबकि दूसरे एवं तीसरे प्रकार के सम्बंध रक्त सम्बंध होते हैं। इसी आधार पर परिवार के सदस्य परस्पर नातेदार भी है। स्पष्ट है कि एक परिवार में वैवाहिक एवं रक्त सम्बंधों का पाया जाना आवश्यक है। इन सम्बंधों के अभाव में परिवार का निर्माण सम्भव नहीं है।

प्रकार्यात्मक दृष्टि से परिवार का निर्माण कुछ मूल उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किया जाता है। परिवार का उद्देश्य यौन सम्बंधों का नियमन करना, सन्तानोत्पत्ति करना उनका लालन–पालन करना, शिक्षण व सामाजीकरण करना एवं उन्हें आर्थिकद्व सामाजिक और मानसिक संरक्षण प्रदान करना है। इन प्रकार्यों की पूर्ति के लिए परिवार के सदस्य परस्पर अधिकारों एवं कर्तव्यों से बंध होते हैं। परिवार की सांस्कृतिक विशेषता यह है कि परिवार समाज की संस्कृति की रचना, सुरक्षा, हस्तान्तरण एवं संवर्धन में योग देता है।

परिवार के प्रकार एवं महत्व : परिवार के महत्व को प्राचीनकाल से ही स्वीकार किया गया है। कॉम्ट ने कहा है कि व्यक्ति नहीं वरन् परिवार ही समाज के अध्ययन की इकाइ है। कूले इसे एक ऐसा प्राथमिक समूह मानते हैं जो मानव स्वभाव की पोषिका है तथा यह मानव में उत्कृष्ट भावना को पैदा करता है। परिवार द्वारा सम्पन्न किये जाने वाले विभिन्न कार्योंय जैसे–यौन संतुष्टिद्व प्रजनन द्वारा मानव जाति की निरन्तरता बनाये रखना, सदस्यों का भरण–पोषण करना, सामाजीकरण, शिक्षा प्रदान करना, नियंत्रण बनाये रखना, संस्कृति का हस्तान्तरण करना, सदस्यों को आर्थिक व मानसिक सुरक्षा प्रदान करना, समाज में व्यक्ति का पद निर्धारण करना तथा विभिन्न प्रकार के राजनीतिक, धार्मिक, मनोवैज्ञानिक, मनोरंजनात्मक कार्यों के कारण परिवार सभी युगों में एक महत्वपूर्ण सामाजिक संस्था रही है। प्रो. डेविस परिवार के चार कार्यों प्रजनन, भरण–पोषण, सामाजिक संस्तरण तथा समाजीकरण के कारण परिवार को महत्वपूर्ण संस्था मानते हैं। बोटोमोर परिवार के इन कार्यो में आर्थिक कार्यों को और जोड़ते हैं। मरडॉक ने 250 समाजों का अध्ययन करके

परिवार के चार सार्वभौमिक कार्यो–यौन संतुष्टि, प्रजनन, आर्थिक तथा शैक्षणिक कार्यों कार्यों का उल्लेख किया है। पारसन्स ने परिवार के दो मौलिक कार्यो प्राथमिक समाजीकरण और व्यक्तित्व निर्माण का उल्लेख किया। परिवार के अन्य कार्य तो अब विभिन्न संस्थाओं द्वारा किये जाते हैं। मैरिल और एल्ड्रिज परिवार के प्राणीशास्त्रीय कार्यों, समाजीकरण करने व भावात्मक कार्यों को अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं। परिवार के महत्व को प्रकट करते हुए सिडनी ई. गोल्डस्टोन लिखते हैं कि परिवार वह झूला है जिसमें भविष्य का जन्म होता है और वह शिशु–गृह है जिसमें नए प्रजातंत्र का जन्म होता है। परम्परा के द्वारा परिवार का सम्बंध भूतकाल से होता है, परन्तु सामाजिक उत्तरदायित्वों तथा सामाजिक विश्वास के द्वारा परिवार भविष्य से भी सम्बन्धित है। आधुनिक युग में परिवार को अनेक शक्तियों ने प्रभावित किया है और उसके कार्यों एवं महत्व में कुछ कमी आयी है, किन्तु आज भी अनेक कार्य ऐसे है जो केवल परिवार ही सम्पन्न कर सकता है। उन कार्यों को करने के लिये परिवार ही एकमात्र संस्था है। और इस रूप में उसका महत्व आज भी है और भविष्य में भी बना रहेगा। सभ्यता की उन्नति किसी भी दिशा में हो परन्तु प्रत्येक समाज के अधिकांश सदस्य अपनी जैविकीय, मानसिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति परिवार रूपी संस्था में ही ढूंढते रहेंगे। परिवार ही बच्चों के पालन–पोषण व प्रशिक्षण की सर्वोत्तम संस्था रही है, यही परम्परा और संस्कृति का वाहक और व्यक्तित्व के विकास का प्रेरक है। बोगार्डस ने परिवार के महत्व को दर्शाते हुए उचित ही लिखा है कि सभ्यता का भावी अवस्था में घर (परिवार) मानव जाति की अनौपचारिक शिक्षण शाला और मानव स्नेहों का उत्तम केन्द्र बना रहेगा।

परिवार समाज की आधारभूत ईकाई है। मानव ने अनेकानेक अविष्कार किये है, किन्तु आज तक वह कोई भी ऐसी व्यवस्था नहीं कर पाया जो परिवार का स्थान ले सके। इसका मूल कारण यह है कि परिवार द्वारा किये जाने वाले प्रकार्य अन्य संघ एवं संस्थाएं करने में असमर्थ है। हम यहाँ परिवार के कार्यों का संक्षेप में उल्लेख करेंगे। परिवार के इन विभिन्न कार्यों से परिवार का महत्व स्वतः ही स्पष्ट हो जाता है।

(क) प्राणीशास्त्रीय कार्य

परिवार के प्राणीशास्त्रीय कार्य निम्नांकित हैं–

1. यौन इच्छाओं की पूर्ति : मानव की आधारभूत आवश्यकताओं में यीन संतुष्टि भी महत्वपूर्ण है। परिवार ही वह समूह है जहाँ मानव समाज स्वीकृत विधि से व्यक्ति अपनी यौन इच्छा की पूर्ति करता है। कोई भी समाज यौन सम्बंध स्थापित करने की नियमहीन एवं निर्वाध स्वतंत्रता नहीं देसकता क्योंकि यौन सम्बंधों के परिणामस्वरूप संतानोत्पति होती है, नातेदारी व्यवस्था जन्म लेती है।

2. संतानोत्पत्ति : यौन संतुष्टि एक दैहिक क्रिया के रूप में समाप्त नहीं होती, वरन् इसका परिणाम संतानोत्पत्ति के रूप में भी होता है। मानव समाज की निरन्तरता बनाये रखने के लिए यह आवयश्क है कि मृत्यु को प्राप्त होने वाले सदस्यों का स्थान नवीन सदस्यों द्वारा भरा जाये। परिवार ही समाज की इस महत्वपूर्ण कार्य को निभाता है। परिवार के बाहर भी संतानोत्पत्ति हो सकती है, किंतु कोई भी समाज अवैध संतानो को स्वीकार नहीं करता।

3. प्रजाति की निरन्तरता : परिवार ने ही मानव जाति को अमर बनाया है। यही मृत्यु और अमृत्व का संगम स्थल है। नयी पीढी को जन्म देकर परिवार ने मानव स्थिरता एवं निरन्तरता को बनाये रखा है।

ख. शारीरिक कार्य

परिवार के शारीरिक कार्य निम्नांकित है–

1. शारीरिक रक्षा : परिवार अपने सदस्यों को शारीरिक संरक्षण प्रदान करता है, वृद्धावस्था, बीमारी, दुर्घटना, असहाय अवस्था, अपाहित होने आदि की अवस्था में परिवार ही अपने सदस्यों की देखरेख एवं सेवा करता है। गर्भवती माता एवं नवजात शिशु की शारीरिक रक्षा का भार भी परिवार पर ही होता है।

2. बच्चों का पालन पोषण : पृथ्वी पर ही मानव ही एक ऐसा प्राणी है जिसका शैशव काल अन्य प्राणियों की तुलना में लम्बा होता है। इस अवधि में उसका लालन–पालन परिवार द्वारा ही किया जाता है। वर्तमान समय में शिशुओं के लालन पालन के लिए अनेक संगठनों का निर्माण किया गया है, किन्तु जो भावात्मक पर्यावरण बच्चों के विकास के लिए आवश्यक है, वह केवल परिवार ही प्रदान कर सकता है।

3. भोजन का प्रबन्ध : परिवार अपने सदस्यों के शारीरिक अस्तित्व के लिये भोजन की व्यवस्था करता है। आदिकाल से ही अपने सदस्यों के लिए भोजन जुटाना परिवार का प्रमुख कार्य रहा है। आदिम समाजों में जहाँ भोजन जुटाना एक सामूहिक क्रिया है, वही परिवार का यह मुख्य कार्य है।

4. निवास एवं वस्त्र की व्यवस्था :परिवार अपने सदस्यों के लिए निवास की भी व्यवस्था करता है। घर ही वह स्थान है जहाँ जाकर मानव को पूर्ण शान्ति प्राप्त होती है। सर्दी, गर्मी एवं वर्षा से रक्षा के लिए परिवार ही अपने सदस्यों को वस्त्र एवं शरण स्थान प्रदान करता है।

ग. आर्थिक कार्य

परिवार द्वारा किये जाने वाले आर्थिक कार्य निम्नांकित हैं–

1. उत्तराधिकार का निर्धारण : प्रत्येक समाज में सम्पत्ति एवं पदों के पुरानी पीढी द्वारा नयी पीढी को हस्तांतरण की व्यवस्था पायी जाती है और यह कार्य परिवार को ही करना होता है। वंशगत सम्पत्ति के हस्तान्तरण के प्रत्येक समाज के अपने नियम है।

2. उत्पादन इकाई : परिवार उपभोग एवं उत्पादन की इकाई है। आदिम समाजों में तो अधिकांश उत्पादन का कार्य परिवार के द्वारा ही किया जाता है। मानव समाज की माज की आदिम अवस्थाओं में से जैसे–शिकार, पशुपालन एवं कृषि अवस्थाओं में परिवार द्वारा ही सम्पूर्ण उत्पादन का कार्य किया जाता था। प्राचीन उद्योगों में भी निर्माण का कार्य परिवार के द्वारा ही होता था। वर्तमान में भी अविकसित और अपूर्ण औद्योगिक अवस्था वाले समाजों में निर्माण का कार्य परिवार के स्त्री पुरुषों एवं बच्चों द्वारा ही किया जाता है।

3. श्रम–विभाजन : परिवार में श्रम विभाजन का सबसे सरल रूप देखा जा सकता है। जहाँ पुरुष, स्त्री एवं बच्चों के बीच कार्य का विभाजन होता है। क परिवार में कार्य विभाजन का आधार यौन एवं आयु दोनों है। स्त्रियाँ गृह कार्य करती हैं तो पुरुष बाह्य कार्य तथा बच्चे छोटा–मोटा कार्य। शक्ति या परिश्रम साध्य कार्य पुरुषों द्वारा किये जाते हैं।

4. आय तथा सम्पत्ति का प्रबन्ध : परिवार की विशेषताओं के दौरान प्रत्येक परिवार के पास सदस्यों के भरण–पोषण के लिए कोई अर्थव्यवस्था अवश्य होती है। इस अर्थव्यवस्था के द्वारा वह आय प्राप्त करता है। परिवार की गरीबी एवं समृद्धि का पता आय से ही ज्ञात होता है। प्रत्येक परिवार के पासजमीन, जेवर, औजार, नकद, सोना, पशु, दुकान आदि के रूप में चल और अचल सम्पत्ति होती है, जिसकी देख–रेख और सुरक्षा भी वही करता है।

घ. धार्मिक कार्य

प्रत्येक परिवार किसी न किसी धर्म का अनुयायी भी होता है। सदस्यों को धार्मिक शिक्षा, धार्मिक प्रथाएं, नैतिकता, व्रत, त्यौहार आदि का ज्ञान भी परिवार ही कराता है। ईश्वर पूजा एवं अराधनाद्व पूर्वज पूजा, आदि कार्यों का एक व्यक्ति परिवार के अन्य सदस्यों से ही सीखता है। पाप–पुण्य, स्वर्ग–नरक, हिंसा–अहिंसा की धारणा भी एक व्यक्ति परिवार से ही ग्रहण करता है।

ङ. राजनीतिक कार्य

परिवार राजनीतिक कार्य भी करता है। आदिम और सरल समाजों में जहाँ प्रशासक या जनजाति का मुखिया परिवारों के मुखियाओं से सलाह लेकर कार्य करता है वहाँ परिवार द्वारा महत्वपूर्ण राजनीतिक भूमिका निभायी जाती है। भारत में संयुक्त परिवारों में कर्त्ता ही परिवार में प्रशासक होता है, वही परिवार के झगड़ों को निपटाने एवं न्याय करने वाला जज एवं ज्यूरी होता है।

च. समाजीकरण का कार्य

परिवार में ही बच्चे का समाजीकरण प्रारम्भ होता है। समाजीकरण की क्रिया से जैविक प्राणी सामाजिक प्राणी बनता है, वहीं उसे परिवार में समाज के रीति रिवाजों, प्रथाओं, रूढ़ियों और संस्कृति का ज्ञान प्राप्त होता है। धीरे–धीरे बच्चा समाज की प्रकार्यात्मक इकाई बन जाता है। परिवार ही समाज की संस्कृति को पीढ़ी दर पीढी हस्तान्तरित करता है।

छ. शिक्षात्मक कार्य

परिवार ही बच्चे की प्रथम पाठशाला है जहाँ उसके व्यक्तित्व का निर्माण होता है। परिवार के द्वारा दी गयी शिक्षाएं जीवन पर्यन्त आत्मसात होती रहती है। महापुरुषों की जीवनियां इस बात की साक्षी है कि उनके व्यक्तित्व के निर्माण में परिवार की भूमिका सबसे ज्यादा रही है। आदिम समय में जब आज की तरह शिक्षण संस्थाएं नहीं थी तो परिवार ही शिक्षा की मुख्य संस्था थी। परिवार में हीबालक दया, स्नेह, प्रेम, सहानुभूति, त्याग, बलिदान, आज्ञा पालन, कर्तव्यपरायणता आदि का पाठ सीखता है।

ज. मनोवैज्ञानिक कार्य

परिवार अपने सदस्यों को मानसिक सुरक्षा और संतोष प्रदान करता है। परिवार के सदस्यों में परस्पर प्रेम, सहानुभूति और सद्भाव पाया जाता है। वहीं बालक में आत्मविश्वास पैदा करता है। जिन बच्चों को माता–पिता का प्यार व स्नेह नहीं मिल पाता, वे अपराधी एवं विघटित व्यक्तित्व वाले बन जाते हैं। माता–पिता में से किसी की मृत्यु, तलाक, पृथक्करण, घर से अनुपस्थिति, आदि के कारण बच्चे को स्नेह एवं मानसिक सुरक्षा नहीं मिल पाने पर उसके व्यक्तित्व का विकास नहीं हो पाता है।

झ. सांस्कृतिक कार्य

परिवार ही समाज की संस्कृति की रक्षा करता है तथा नयी पीढी को संस्कृति का ज्ञान प्रदान करता है। परिवार ही संस्कृति का हस्तान्तरण कर संस्कृति की निरन्तरता एवं स्थायित्व बनाये रखता है।

ञ. मनोरंजनात्मक कार्य

परिवार अपने सदस्यों के लिए मनोरंजन का कार्य भी करता है। छोटे–छोटे बच्चों की प्यारी बोली एवं उनके पारस्परिक झगड़े व दाम्पत्य प्रेम परिवार के मनोरंजन के केन्द्र है। परिवार में मनाये जाने वाले त्यौहार, उत्सव, धार्मिक, कर्मकाण्ड, विवाह, उत्सव, श्राद्ध व भोज, भजन–कीर्तन आदि परिवार में मनोरंजन प्रदान करते हैं।

ट. मानव अनुभवों का हस्तान्तरण

पुरानी पीढी द्वारा सकलित ज्ञान एवं अनुभव का संरक्षण एवं हस्तान्तरण कर परिवार समाज को अपना अमूल्य योगदान देता है। इसके अभाव में समाज की प्रत्येक पीढी को ज्ञान की नये सिरे से खोज करनी पड़ेगी।

जनसंख्या शिक्षा में परिवार की भूमिका एवं उत्तरदायित्व

परिवार बालकों एवं बच्चों की प्रथम पाठशाला है। बालक पर अपने परिवार के प्रभावों को स्पष्ट प्रभाव पड़ता है। बालक जितना अपने परिवार से सीखता है उतना ही शायद वह कहीं और से सीखता होगा। जनसंख्या शिक्षा में परिवार भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका एवं उत्तरदायित्व का निर्वहन करता है।

1. योग्य नागरिकों का निर्माण : परिवार हमेशा से अपने सदस्यों को सामाजिक कार्यों को करने के लिए प्रोत्साहित करता है। समाज विरोधी कार्यों को अपनी स्वीकृति नहीं देता है। इससे बच्चों को जन्म से ही योग्य नागरिक बनने की प्रेरणा मिलती है। जनसंख्या शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति परिवार के द्वारा सरलता से प्राप्त किया जा सकता है।

2. चरित्र निर्माण : बच्चों के चरित्र निर्माण की प्रमुख सीढी परिवार ही है। परिवार की आदतों, चरित्र, कार्य करने की प्रवृत्ति इत्यादि को करीब से सीखता है। परिवार सदैव अपने सदस्यों को नैतिकता का पाठ पढाता है। आज भी भारतीय परिवारों में भगवान, महापुरुषों की कहानियों को सुनाया जाता है। इससे बच्चों में अच्छे चरित्र का निर्माण होता है।

3. वातावरण से अनुकूलन : बालक जिस प्रकार के वातावरण में रहता है स्वयं को उसके अनुरूप ढाल लेता है। यह देखा गया है कि जो बच्चा अमीर परिवार में रहता है वह गरीब परिवार के आदतों, रुचि रूझान एवं सभ्यता मे भिन्न होता है। यदि उसका वातावरण मे परिवर्तन कर दिया जाय तो दोनो स्वभाव रहन–सहन, बोल–चाल, पहनावा, भोजन आदि मे कुछ भिन्नता आ जायेगी और कुछ समय स्वंय को समायोजित करने मे वह परेशानी अनुभव करेगा अतः परिवार का वातावरण जैसा होता है, बच्चा उसी प्रकार की परिस्थितियो से प्रभावित होता है।

4. परिवार का सीमित आकार :आधुनिक समय मे परिवारो के सदस्यो की संख्या में भारी गिरावट देखने को मिलती है। संयुक्त परिवार की प्रथा लगभग समाप्त होने के कागार पर हैं। अब एक परिवार मे सदस्यो की औसत संख्या 6 से 7 की है। पुरानी पीढ़ी वृद्ध होकर मृत्यु को प्राप्त होती जाती है। अतः नयी पीढी के आने पर भी सदस्यों की संख्या एक निश्चित सीमा तक ही बनी रहती है। सदस्यों के विभाजन के कारण भी परिवार का आकार छोटा बना रहता है। कभी–कभी परिवार में जन्म लेने के अतिरिक्त गोद लेने से भी इसकी सदस्यता प्राप्त की जाती है।

5. सदस्यों का उत्तरदायित्व : प्रत्येक परिवार अपने सदस्यों से कुल उत्तरदायित्व निभाने की अपेक्षा रखता है। संकट के समय व्यक्ति अपने समाज व देश के लिए त्याग व बलिदान करता है, परन्तु परिवार के लिए तो वह सदैव ही कुछ न कुछ करता रहता है। परिवार के लिए वह बड़े से बड़ा त्याग करने के लिए तैयार रहता है। सदस्य सदा एक–दूसरे के हित व सुख–सुविधा की बात देखना चाहते हैं। सदस्यों की इसी भावना के कारण ही परिवार का संगठन स्थायी बना रहता है।

6. सामाजिक नियंत्रण : परिवार में सामाजिक नियंत्रण बना रहता है। अनेक ऐसे नियम, प्रथाएँ एवं रूढ़िया है जो परिवार को बनाये रखने एवं उस पर नियंत्रण रखने में योग देती है। कोई भी व्यक्ति मनमाने ढंग से विवाह सूत्र में बंधकर परिवार का निर्माण नहीं कर सकता, वरन् उसे इस संदर्भ में सामाजिक नियमों एवं कानूनों का पालन करना होता है। भारत में विवाह एवं परारि से सम्बन्धित अनेक कानून बन चुके है। 1954 का विशेष विवाह अधिनियम तथा का हिन्दू विवाह अधिनियम, विवाह एवं परिवार का नियमन करते हैं।

7. सामान्य निवास : परिवार के सभी सदस्यों के निवास की कोई न कोई व्यवस्था अवश्य होती है। विवाह के बाद जब पति–पत्नी, पति के वंशजों के यहाँ रहते हैं उसे हम पितृस्थानीय परिवार कहते हैं। कुछ जनजातियों को छोड़कर अधिकांश भारत में यह प्रथा दिखने को मिलती है। विवाह के बाद पति जब पत्नी के घर जाकर रहता है तो हम उसे मातृ स्थानीय परिवार कहते हैं। यह व्यवस्था नायर, गारो, खासी आदि जनजातियों में पायी जाती है। लेकिन जब विवाह के बाद नवविवाहित दम्पत्ति न तो मातृपक्ष के साथ और न ही पितृपक्ष के साथ रहता है, वरन् अलग निवास बनाकर रहता है तो उसे नवस्थानीय परिवार परिवार कहते हैं।

पारिवारिक जीवन की शिक्षा की आवश्यकता

2001 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या 1027015247 धी। जिसमें पुरुषों की पुरुषों की संख्या 531277078 और महिलाओं की संख्या 495738169 थी। भारत को

अगर क्षेत्रफल की दृष्टि से देखे तो पायेंगे कि भारत के पास 1357.90 लाख वर्ग किमी. भू–भाग है जो विश्व के कुल भू–भाग का 2.4 प्रतिशत हैं और विश्व की कुल जनसंख्या का 16.7 प्रतिशत आबादी का भार भारत को वहन करना पड़ता है। भारत एक विकासशील देश है संसाधनों का अभाव, चिकित्सा का अभाव, रोजगार का अभाव और अत्यधिक विशाल जनसंख्या इसके तरक्की के मार्गों में रुकावट पैदा करता है। अज्ञानता, बाल–विवाह पारिवारिक जिम्मेदारियों से मुक्ति कुछ ऐसे कारण है जिससे जनसंख्या में लगातार वृद्धि हो रही है। इस पर अंकुश लगाने में पारिवारिक जीवन की शिक्षा की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है।

जनसंख्या वृद्धि अपने साथ–साथ कई समस्याओं को भी ले आता है यह समस्यायें परिवार, पड़ोस, समाज एवं सम्पूर्ण विश्व के लिए घातक सिद्ध हो सकती है। इसकी जिम्मेदारियों से अपना पल्ला नहीं झाड़ा जा सकता। जनसंख्या नियंत्रण में परिवार की भूमिका काफी महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकती है बस जरूरत है माता–पिता को अपने बालकों को इसके दुष्परिणाम बताते हुए इसको रोकने में अपनी भूमिका का निर्वहन करना। परिवार ही वह आधार है जहाँ बालकों के स्वास्थ्य होने की सारी देखभाल, आहार इत्यादि सुलभ उपलब्ध होते हैं। राष्ट्र की खुशहाली एवं समृद्धि हेतु आवश्यक है कि देश के कर्णधार भी स्वास्थ्य तथा सम्पन्न हो, यह बात भारत के प्रथम प्रधानमंत्री स्वर्गीय पण्डित जवाहर लाल नेहरू के वक्तव्य से भी स्पष्ट होता है कि ''स्वास्थ्य बच्चे तथा नागरिक ही एक स्वस्थ तथा वैभव सम्पन्न राष्ट्र का निर्माण कर सकते हैं।''

पालकों के साथ–साथ बालकों में जनसंख्या वृद्धि के दुष्परिणामों से परिचित कराया जाये। उन्हें छोटे परिवार के महत्व से परिचय कराया जाये। बालकों को जन्म दर एवं मृत्यु दर इसके अधिक अथवा कम होने के दुष्परिणाम या फायदों से परिचित कराया जाये। विवाह में देर करने से क्या लाभ हो, एक या दो संतानों से क्या फायदा है, बालक एवं बालिकाओं के अंतर ना करना यह सब परिवार के माध्यम से ही बताना संभव है। यह सभी उपाय जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण करने में कारगर भूमिका निभायेंगे। यह सभी कार्य जनसंख्या शिक्षा के माध्यम से ही सम्भव है। जनसंख्या शिक्षा के द्वारा ही छात्रों एवं अभिभावक में बढ़ती जनसंख्या वृद्धि के प्रति सजगता की भावना विकसित की जा सकती है। परिवार एवं उसके सदस्यों को स्वास्थ्य एवं समृद्ध रखने की शिक्षा जनसंख्या शिक्षा द्वारा ही दी जा सकती है। इस दृष्टि से यह कहा जाय कि जनसंख्या शिक्षा केवल प्रचार या तकनीक ही नहीं वरन् यह समाज में लोगों को उत्तरदायित्व जीवन जीने के प्रति सजगता विकसित करने वाली है। यह जीवन को सुखी और नियोजित बनाने वाली शिक्षा है तथा इसके माध्यम से यह सीखते हैं कि हम किस प्रकार सामाजिक, आर्थिक एवं तकनीकों स्थितियों में उत्कृष्ट जीवन–यापन कर सकते है। जनसंख्या शिक्षा के अन्तर्गत पारिवारिक जीवन की शिक्षा का अपना विशिष्ट स्थान है। आज के मशीनी युग में जनसंख्या शिक्षा का प्रमुख अभिकरण परिवार है। मात्र सरकारी प्रयत्नों एवं प्रयासों पर निर्भर नहीं रहना चाहिये, इसको हल करने के लिए सभी को मिलजुल कर प्रयास करना चाहिये।

जनसंख्या शिक्षा पर के शैक्षिक प्रभाव

जनसंख्या शिक्षा मे परिवार की भूमिका हमेशा से ही महत्वपूर्ण रही है। समाज एवं देश मे परिवार ही वह संस्था है। जनसंख्या नियंत्रण मे प्रत्यक्ष तौर पर अपनी भूमिका निभा सकता

हैं। बालक जन्म के पूर्व से ही सीखना शुरू कर देता है वह अपने माता–पिता तथा अन्य पारिवारिक सदस्यों से सुनकर, देखकर जनसंख्या वृद्धि एवं इसके दुष्परिणामों के बारे में काफी कुछ सीख लेता है, इसके पश्चात् ही वह विद्यालय एवं अन्य संस्थाओं से शिक्षा ग्रहण करता है। इससे तात्पर्य यह है कि बालक पर सर्वाधिक प्रभाव उसके परिवार का ही पड़ता है। अतः बालक की शिक्षा में परिवार का विशेष महत्व होता है।

1. प्रारम्भिक अधिगम स्थल : बालक माँ के गर्म से ही सीखना शुरू करदेता है। महाभारत में वीर अभिमन्यु चक्रव्यूह में जाने की कला अपनी माँ केगर्भ में ही सीखा था। परिवार सीखने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। बालक जन्म के समय काफी असहाय होता है, वह अपनी माँ पर पूर्णता निर्भर रहता है माँ की छाप बालक के मन मस्तिष्क पर काफी समय तक अमिट रहती है। परिवार के पश्चात् पड़ीस, खेल मैदान, विद्यालय बालक का प्रारम्भिक अधिगम स्थल होता है।

2. नैतिक एवं चारित्रिक विकास : बालक का नैतिक एवं चारित्रिक विकास सर्वप्रथम परिवार एवं घर से ही होता है। बालक सारे संस्कार, रीति–रिवाज, नैतिकता परिवार के अन्य सदस्यों के क्रिया कलापों से सीखता है। विद्यालय जाने के पूर्व बालक अपने परिवार के सदस्यों के सम्पर्क में रहता है। उनको करीब से देखकर, सुनकर तथा उनकी नकल करके बहुत से व्यवहार वह विद्यालय में प्रवेश लेने से पूर्व ही सीख लेता है। बड़ों की आज्ञा मानना, उसका आदर करना, प्रार्थना करना, सुबह जल्दी उठना, प्रतिदिन नहाना इत्यादि क्रियाओं को वह अपने परिवार से ही सीखता है।

3. वातावरण में अनुकूलन : बालक अपने आपको वातावरण से अनुकूलित कर लेता है। बालक वातावरण को प्रभावित नहीं करता बल्कि वातावरण से प्रभावित होता है। अमीर एवं गरीब बच्चें के आदतों, रुचि, रूझान एवं सभ्यता में भिन्नता होती है। यदि इन दोनों के वातावरणों में परिवर्तन कर दिया जाये तो दोनों के रहन–सहन, आदतों, पहनावा, भोजन आदि में अपने आप परिवर्तन आ जायेगा। शुरुआत में तो बालक को नए वातावरण के अनुरूप ढलने में दिक्कत होगी, परन्तु कुछ दिनों पश्चात् यह उसके आदतों में स्वतः आ जायेगी। अतः परिवार का वातावरण जैसा होता है, बच्चा उसी प्रकार की परिस्थितियों से प्रभावित होता है। मजदूर एवं किसान का बेटा सारा दिन धूप, बरसात, ठण्ड में काम कर सकता है, परन्तु अमीर परिवार का बालक ऐसा नहीं कर सकता है।

4. बालक के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास : बालक के व्यक्तित्व का सर्वागीण विकास में परिवार एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में सामने आता है। परिवार ही वह सामाजिक संस्था है जहाँ पर बालक के चहुंमुखी विकास पर ध्यान दिया जाता है। परिवार का आकार व्यक्तित्व को प्रभावित करता है। परिवारअगर बड़ा है तो बालकों को व्यक्तित्व पर खास ध्यान नहीं दिया जाता है और अगर परिवार का आकर छोटा है तो बालक के व्यक्तित्व निखारने में सहुलियत आती है।

5. सामाजिक अनुकूलन : मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज में रहता है एवं अपनी उन्नति में समाज की सहायता लेता है। समाज एक तरह से मनुष्य का लघु परिवार होता है। परिवार की मान्यताओं को मानते हुए समाज के साथ भी उसका समायोजन कर लेता है तथा अपनी परिस्थितियों को उसके अनुरूप ढाल लेता है। यदि परिवार में बालकों को समाज के प्रति अपने उत्तरदायित्वों का ज्ञान नहीं कराया जाय तो वह स्वयं को समाज

की मान्यताओं तथा परम्पराओं के प्रति अनुकूलन में परेशानी का अनुभव करेगा। अतः परिवार ही बालक के सामाजिक अनुकूलन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगा।

6. मानवीय गुणों का विकास : परिवार ही वह संस्था है जहाँ सर्वप्रथम बालकों में मानवीय गुणों का विकास किया जाता है। परिवार में ही बालक, भाई–चारा, सहयोग, प्रेम, त्याग, बलिदान, सहानुभूति, धार्मिक सहिष्णुता, अहिंसा जैसे मानवीय गुणों को सीखता है। परिवार ही है जो बालक को मानव विरोधी एवं समाज–विरोधी कार्यों को करने से रोकते हैं। अच्छे और सभ्य परिवारों में मानवीय गुणों का एवं बुरे और असभ्य परिवारों में अमानवीय गुणों का विकास होते देखा गया है।

7. उच्च आदर्शों का निर्धारण : भारतीय इतिहास में कई महापुरुषों ने अपनी अमिट पहचान बनाई है, इन्होंने देश ही नहीं बल्कि विदेशों में भी अपने आदर्शों के कारण पूज्यनीय रहे हैं। बालकों के लिए इन महापुरुषों के अतिरिक्त कोई और उनमें उच्च आदर्श की भावना नहीं जगा सकता। बालक अपने पिता से न्याय तथा कर्तव्य पालन की भावना तथा माँ से प्रेम तथा समानता एवं भाई–बहनों से प्यार, एकता, भाईचारा एवं सहयोग की भावना सीखना अगर परिवार सजग है तो उसमें सहायता, परोपकार, सहानुभूति, क्षमा, सच्चाई, उदारता का आदर्श स्थितियों में विकास होगा, जिसका उपयोग व्यावहारिक जीवन में करके वह एक आदर्श प्रस्तुत करेगा।

8. अनुशासित वातावरण :परिवार में ही बालक सर्वप्रीम अनुशासन का पाठ पढता है। परिवार ही वह संस्था है जहाँ पर बालकों को उनके अच्छे आदतों एवं अच्छे कामों के लिए प्रशासित किया जाता है तथा समाज विरोधी कार्यों के लिए दण्डित किया जाता है। बड़ों की आज्ञा का पालन करना, समय पर अपने कामों को करना, किसी से झगड़ा न करना, मिल–जुलकर रहना, झूठ न बोलना, चोरी न करना इत्यादि गुणों का विकास परिवार में ही सीखाया जाता है। यही आदते आगे चलकर अपने अनुशासन की भावना को कूट–कूटकर भर देती है।

9. संवेगात्मक विकास : परिवार में बालक की आदतों, भावनाओं एवं संवदेनाओं का शिक्षा के द्वारा पूर्ण विकास किया जाता है। परिवार का स्पष्ट. प्रभाव बालक के मन मस्तिष्क पर पड़ता है। यदि बालक के घर में संगीत एवं कला का माहौल है तो बालक संगीत एवं कला प्रेमी बनेगा अगर परिवार में खेल का वातावरण है तो बालक का रूझान खेल की ओर होगा। परिवार के सदस्य शान्त और सौभ्य स्वभाव के है तो बालक का स्वभाव भी उन्हीं के अनुरूप होगा।

10. कर्त्तव्यपालन की आदतों का निर्माण : परिवार मे रहते हुए अबोध तो बालक जब अन्य सभी सदस्यो को अपने कर्त्तव्य पालन में व्यस्त देखता है, उसका मन भी ऐसा ही करने की धारणा बना लेता है तथा वह अपने परिवार के बड़े लोगों का अनुकरण करने लगता है। छोटे बालकों को उनके माँ–पिता भी अपने कर्त्तव्यों स्नेह, सुरक्षा प्रदान करेगें तो वह को सुचारू रूप से निभायेगा। जब बालक अपने भाई–बहन, माता–पिता आदि को देखकर स्वयं भी कर्त्तव्य पालन करेगा।

प्रत्येक बालक शिक्षा का पहला पाठ परिवार से ही सीखता है। सामान्य शिक्षा के साथ जनंसख्या शिक्षा की सीख का केन्द्र परिवार ही है। प्रत्येक बालक में सभी प्रकार के गुण

संघर्ष के साथ आर्थिक सम्पन्नता से आते हैं। और आर्थिक विषमता तथा सम्पन्नता घर में कमाने वाले कितने है और खाने वाले कितने है। इस पर निर्भर करता है।

संक्षेप में यदि बालक के सम्पूर्ण विकास के लिए जनंसख्या शिक्षा को और अधिक उपयोगी बनाना है तो घर के साथ मिलकर विद्यालय को चलना चाहिए। जनसंख्या शिक्षा के साथ ही बालक का पूर्ण विकास शीघ्र तथा स्वाभाविक रूप से हो सकेगा। घर तथा विद्यालय मिलकर बालक से सम्बन्धित समस्याओं सरलापूर्वक हल कर सकते हैं।

परिवार में आधुनिक परिवर्तन

परिवार में होने वाले आधुनिक परिवर्तनों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम वे परिवर्तन जो परिवार के ढांचे या संरचना में हो रहे हैंय द्वितीय, वे परिवर्तन जो परिवार के कायों एवं प्रकार्यों में हो रहे हैं। यहाँ दोनों ही प्रकार के परिवर्तनों पर चर्चा करेंगे।

परिवार के ढांचे में परिवर्तन

अनेक कारणों के संयुक्त प्रभाव के फलस्वरूप परिवार के नये प्रतिमान उभरकर सामने आ रहे हैं। परिवार के आकार, प्रकार, सदस्यों के सम्बंधों, प्रस्थिति और भूमिकाओं, अधिकारों एवं कर्तव्यों तथा परिवार के ढांचे को निर्मित करने वाले नियमों में वर्तमान समय में काफी परिवर्तन आये हैं। यहां हम इन्हीं पर चर्चा करेंगे।

1. परिवार के आकार का घटना : वर्तमान समय में परिवार का आकार अर्थात् सदस्य संख्या घटती जा रही है। अब सीमित परिवार की ओर लोगों का झुकाव बढ़ता जा रहा है। सन्तति निग्रह या परिवार नियोजन से सम्बन्धित विभिन्न विधियों के प्रयोग परिवारों की सदस्य संख्या घटाकर दो या तीन तक सीमित कर दी है। अब परिवार में 20 या 25 सदस्य दिखाई नहीं पड़ते। अब तो पति–पत्नी और उनके अविवाहित बच्चों से मिलकर नाभिक परिवार ही बनने लगे हैं।

2. पति–पत्नी के सम्बंधों में परिवर्तन : कुछ समय पूर्व तक पत्नी के लिए पति ही परमेश्वर या देवता के रूप में था। चाहेपति कैसा ही क्रूर या अत्याचारी क्यों न हो, पत्नी को उसे परमेश्वर मानकर उचित–अनुचित सभी प्रकार की आज्ञाओं का पालन करना पड़ता था। अब इस स्थिति में अन्तर आया है। शिक्षा तथा सामाजिक चेतना ने स्त्रियों को अपने अधिकारों के प्रति जागरुक बनाया है। अब वे दासी के रूप में नहीं बल्कि सहचरी या साथी के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने लगी है।

3. पिता के अधिकारों में कमी तथा अन्य सदस्यों के महत्व को बढ़ाना : अब परिवार अधिनायकवादी आदर्शों से प्रजातान्त्रिक आदर्शों की ओर बढ़ रहे हैं। अब पिता परिवार में निरंकुश शासक के रूप में नहीं रहा है। परिवार से सम्बन्धित महत्वपूर्ण निर्णय अब केवल पिता के द्वारा ही नहीं लिये जाते हैं। अब ऐसे निर्णयों में पत्नी और बच्चों का महत्व भी बढ़ता जा रहा है। अब परिवार में स्त्री को माँ स्वरूप नहीं समझा जाता है। अब बच्चों के प्रति भी माता–पिता के मनोभावों में परिवर्तन आया है। वे समझने लगे हैं कि बच्चों को मार–पीट कर या उनकी इच्छाओं का दमन करके उन्हें सही रास्ते पर नहीं

लाया जा सकता और उनके व्यक्तित्व का ठीक से विकास नहीं किया जा सकता। स्पष्ट है कि परिवार में स्त्री सदस्यों एवं बच्चों का महत्व बढ़ा है।

4. विवाह एवं यौन–सम्बंधों में परिवर्तन : वर्तमान में विवाह एवं यौन सम्बंधों की दृष्टि से काफी परिवर्तन आये हैं। अब बाल विवाहों की संख्या घटती और विलम्ब–विवाहों की संख्या बढ़ती जा रही है। अब जीवन साथी के चुनाव में भी लड़के–लड़कियां पहले की तुलना में काफी स्वतंत्र हैं। वर्तमान में प्रेम–विवाह, कोर्ट मैरिज तथा अन्तर्जातीय विवाहों की संख्या बढ़ती जा रही है। अब विवाह में रोमांस का महत्व बढ़ता जा रहा है। आजकल लोग एक विवाह को ही उचित समझते हैं। अब परिवार में विधवाओं के प्रति सहिष्णुतापूर्ण दृष्टिकोण पाया जाता है।

5. आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से स्त्रियों की स्वतंत्रता का बढ़ाना : वर्तमान में परिवार की सम्पत्ति में स्त्रियों के साम्पत्तिक अधिकार बढ़े हैं। अब इन्हें नौकरी या व्यापार करने की भी स्वतंत्रता है। इससे स्त्रियों की आर्थिक स्वतंत्रता बढ़ी है। अब वे परिवार पर भार या पुरुषों की कृपा पर आश्रित नहीं हैं। इससे परिवार में स्त्रियों का महत्व बढ़ा है, परन्तु साथ ही उनके दायित्वों के एक हो जाने से और अन्य सदस्यों की अपेक्षाओं के अनुरूप दायित्व नहीं निभा पाने के कारण उन्हें अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। आज उनके जीवन ने अनेक तनाव एवं कुंठाए पायी जाती है। स्त्री–शिक्षा के प्रसार ने सामाजिक चेतनालले और स्त्रियों को अपने अधिकारों के प्रति सजग बनाने में योग दिया है। वे सामाजिक जीवन से सम्बन्धित विभिन्न गतिविधियों में भाग लेती है। इससे पारिवारिक क्षेत्र में कहीं कहीं भूमिका संघर्ष की स्थिति पायी जाती है।

6. नावेदारी के महत्व का घटना : वर्तमान समय में नाते–रिश्तेदारों का महत्व कम होता जा रहा है। अब लोग अपने रिश्तेदारों से दूर भागना चाहते हैं। आज नाते–रिश्तेदारों के साथ सम्बंधों में घनिष्ठता का अभाव पाया जाता है।

7. परिवार में अस्थायित्व का बढ़ाना : आजकल अनेक परिवारों को अस्थायित्व को समस्या का सामना करना पड़ता है। जहाँ पति या पत्नी कर्तव्यों के बजाय अधिकारों पर अधिक जोर देते हैं और अपनी स्वयं की सभी आवश्यकताओं को हर दशा में पूर करना चाहते हैं, वहां पारिवारिक तनाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है जो आगे चलकर तलाक का रूप ग्रहण कर लेती है। आज विशेष रूप से नगरीय क्षेत्रों में तलाकों की संख्या बढ़ती जा रही है जो परिवारों के स्थायित्व के लिए एक खतरा है।

8. परिवार के सहयोगी आधार में कमी : आज के आधुनिक परिवारों में व्यक्तिवादिता दड़ी तेजी से बढ़ती जा रही है। व्यक्ति आज अपने परिवार, माता–पिता, भाई–बहनों या अन्य निकट के रिश्तेदारों की चिन्ता नहीं करते हुए अपने ही स्वार्थों की पूर्ति में लगा रहता है। इससे पारिवारिक संगठन पर कुप्रभाव पड़ता है। अब परिवार के सदस्यों में उतना सहयोग व त्याग की भावना नहीं पायी जाती जितनी कुछ समय पूर्व तक पायी जाती थी। आज परिवार की नियंत्रण शक्ति पहले की तुलना में काफी घटी है।

परिवार के कार्यों (प्रकार्यों) में परिवर्तन

परिवार सदैव से मानव के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य करता रहा है। यह व्यक्तियों की विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति करता रहा है, परन्तु वर्तमान में विभिन्न कारणों से जिनका उल्लेख पहले किया जा चुका है, परिवारके प्रकार्यों में काफी परिवर्तन आये हैं। आज परिवार के बहुत से कार्य अन्य समितियों द्वारा किये जाने लगे हैं। परिणामस्वरूप परिवार का महत्व कुछ घटा है और आज के परिवार बालक के व्यक्तित्व के निर्माण में उतनी महत्वपूर्ण भूमिका नहीं निभा पा रहे हैं जितनी पहले निभाते रहे हैं। लेकिन फिर भी परिवार, परिवार ही है जहाँ व्यक्ति सब प्रकार के कष्टों को भूलकर सुख की नींद सोता है और आगे आने वाली चुनौतियों का सामना करने के लिए सामर्थ्य प्राप्त करता है। परिवार के कार्यों में आने वाले प्रमुख परिवर्तन इस प्रकार है–

1. **परिवार के आर्थिक कार्यों में परिवर्तन** : औद्योगिक क्रान्ति पूर्व तक परिवार उत्पादन एवं उपभोग दोनों का ही केन्द्र था। आवश्यकता की सभी वस्तुएं परिवार में ही तैयार की जाती है। परिवार के सभी सदस्य मिलकर परिवार में ही आर्थिक दृष्टि से उत्पादन कार्य करते थे। लेकिन अब परिवार उत्पादन का केन्द्र नहीं रहा है। अब परिवार के विभिन्न सदस्यों को अपनी आजीविका कमाने के लिए अलग–अलग स्थानों पर काम करना पड़ता है। इसके उपरान्त भी उपयोगकी इकाई के रूप में परिवार का महत्व आज भी बना हुआ है।

2. **धार्मिक कार्यों में कमी** : विभिन्न धार्मिक कार्यों का सम्पादन परिवार का मुख्य कार्य था। समय–समय पर परिवार में धार्मिक उत्सव मनाये जाते थे। कभी किसी कथा का तो कभी किसी पाठ या भजन कीर्तन का आयोजन होता था। परिवार के बड़े–बूढ़े सदस्य उपदेशात्मक कहानी–किस्सो को सुनकर, रामायण, महाभारत, गीता आदि धार्मिक ग्रन्थों की महत्वपूर्ण घटनाओं को बताकर बालकों को संस्कारित कर उनके चरित्र एवं व्यक्तित्व निर्माण में योग देते थे। परिवार में धार्मिक कार्यों का महत्व घटा है। अब परिवार संगठन बनाये रखने में धर्म उतनी महत्वपूर्ण भूमिका नहीं निभा पाता जितनी किसी समय निभाता था। अब धर्म की बजाय तर्क की प्रधानता पायी जाती है।

3. **सामाजिक और सांस्कृतिक कार्यों में अन्तर** : आज परिवार के सामाजिक और सांस्कृतिक कार्यों में काफी कुछ परिवर्तन आये है। अब परिवार व्यक्ति की सामाजिक स्थिति के निर्धारण में उतनी महत्वपूर्ण भूमिका नहीं निभा पारहे हैं जितनी कुछ समय पहले तक निभाते रहे हैं। व्यक्तिगत गुणों याउपलब्धियों का महत्व बढ़ जाने से व्यक्ति अपनी स्वयं की क्षमता या गुणों को बढ़ाने की दृष्टि से ज्यादा सोचता और प्रयत्न करता है। परिणाम स्वरूप वह अन्य सदस्यों के हितों की उपेक्षा करता है। आज परिवार का सदस्यों पर वह नियंत्रण नहीं रहा जो किसी समय या कुछ समय पूर्व तक था। अब तो सदस्य सामाजिक व्यवहार की दृष्टि से बहुत कुछ स्वतंत्र है। अब परिवार के द्वारा अपने सदस्यों को सदियों से चली आ रही सांस्कृतिक परम्पराओं से परिचित कराना लाभप्रद नहीं समझा जाता। अब तो परम्परावादिता के बजाय आधुनिकता का प्रभाव और व्यवहार के नवीन प्रतिमानों का महत्व बढ़ता जा रहा है।

4. **परिवार के मनोरंजन सम्बंधी कार्यों में परिवर्तन** : पहले परिवार स्वास्थ्यमनोरंजन का केन्द्र था। सभी सदस्य मिलकर गपशप करते, बालकों की प्यार भरी बातों का आनन्द लेते, कहानी किस्से सुनाते, रामायण, महाभारत आदि की घटनाएं सुनाते। यहाँ सभी

सदस्यों का स्वस्थ्य मनोरंजन हो पाता, परन्तु अब मनोरंजन का व्यापारीकरण हुआ है। परिवार के मनोरंजन सम्बंधी कार्य अब क्लबों, नाटक मण्डलियों, सिनेमाओं आदि ने ले लिये हैं। परिवार तो दो समय भोजन करने और रात्रि विश्राम करने के स्थान मात्र रह गये हैं। परन्तु कुछ लोगों की मान्यता है कि अब परिवार पुनः मनोरंजन का केन्द्र बनता जा रहा है। रेडियो, रेकार्ड प्लेयर, टेप रेकार्डर, टेलीविजन आदि ने सभी सदस्यों को साथ बैठकर इन मनोरंजन के साधनों का आनन्द लेने के लिए प्रेरित किया है। इतना अवश्य है कि अब परिवार के बजाय क्लबों तथा मित्र मण्डलियों में व्यक्तियों की रुचि बढ़ती जा रही है।

5. स्नेह व प्रेम के लिए परिवार पर निर्भरता का बढ़ना :आज व्यक्ति के जीवन में द्वैतीयक समूहों एवं औपचारिक सम्बंधों की प्रधानता है। आज पड़ोस तथा नाते–रिश्तेदारों का महत्व कम हुआ है। द्वैतीयक समूहों में व्यक्ति को स्नेह, प्रेम, सहानुभूति, संतोष एवं शान्ति नहीं मिल पाते, जबकि व्यक्ति की अपनी भावनात्मक संतुष्टि के लिए इन चीजों की काफी आवश्यकता रहती है। आज व्यक्ति स्नेह, प्रेम एवं सहानुभूति परिवार के अतिरिक्त कहीं भी नहीं मिल पा रहे हैं। अतः इन सबके लिए व्यक्ति की परिवार पर निर्भरता बढ़ती जा रही है।

आज परिवार के अनेक कार्य अन्य समितियों ने छीन लिये हैं। राज्य के कार्यों एवं महत्व का विस्तार हुआ है। राज्य ने बालकों को शिक्षा प्रदान करने का दायित्व अपने पर ले लिया है। परिवार की नियंत्रण शक्ति घटी है और राज्य की नियंत्रण शक्ति बढ़ी है। राज्य विभिन्न अधिनियमों के माध्यम से विवाह और परिवार को कभी कुछ प्रभावित कर रहा है। इतना सब कुछ होते हुए भी यह नहीं कहा जा सकता कि परिवार का स्थान और कोई संस्था ले लेगी।

सारांश

परिवार के प्रकार

1. छोटा परिवार

2. संयुक्त परिवार

परिवार के कार्य

(क) प्राणीशास्त्रीय कार्य

1. यौन इच्छाओं की पूर्ति

2. संतानोत्पत्ति

3. प्रजाति की निरन्तरता

(ख) शारीरिक कार्य

1. शारीरिक रक्षा।

2. बच्चों का पालन–पोषण द्य

3. भोजन का प्रबन्ध

4. निवास एवं वस्त्र की व्यवस्था

(ग) आर्थिक कार्य

1. उत्तराधिकार का निर्धारण

2. उत्पादक इकाई

3. श्रम विभाजन

4. आय तथा सम्पत्ति का प्रबन्ध

(घ) धार्मिक कार्य

(ङ) राजनीतिक कार्य।

(च) सामाजीकरण का कार्य।

(छ) शिक्षात्मक कार्य।

(ज) मनोवैज्ञानिक कार्य।

(झ) सांस्कृतिक कार्य

(ञ) मनोरंजनात्मक कार्य

(ट) मानव अनुभवों का हस्तान्तरण

परिवार की भूमिका एवं उत्तरदायित्व

1. योग्य नागरिकों का निर्माण।

2. चरित्र निर्माण।

3. वातावरण से अनुकूलन।

4. परिवार का सीमित आकार।

5. सदस्यों का उत्तरदायित्व

6. सामाजिक नियंत्रण।

7. सामान्यनिवास

जनसंख्या शिक्षा पर परिवार के शैक्षिक प्रभाव

1. प्रारम्भिक अधिगम स्थल

2. नैतिक एवं चरित्रिक प्रभाव

3. वातावरण के अनुकूलन

4. बालक के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास

5. सामाजिक अनुकूलन

6. मानवीय गुणों का विकास

7. उच्च आदर्शों का निर्धारण

8. अनुशासित वातावरण

9. संवेगात्मक विकास

10. कर्तव्य पालन की आदतों का निर्माणा

परिवार में आधुनिक परिवर्तन

1. परिवार के आकार का घटना।

2. पति–पत्नी के सम्बंध में परिवर्तन।

3. पिता के अधिकारों में कमी तथा अन्य सदस्यों के महत्व का बढ़ना।

4. विवाह एवं यौन सम्बंधों में परिवर्तन।

5. आर्थिक और सांस्कृतिक दृष्टि से स्त्रियों की स्वतंत्रता का बढ़ना।

6. नातेदारी के महत्व का घटना।

7. पररिर में अस्थायित्व का बढ़ना

8. परिवार के सहयोगी आधार में कमी। .

परिवार के कार्यों (प्रकार्यों) में परिवर्तन

1. परिवार के आर्थिक कार्यों में परिवर्तन।

2. धार्मिक कार्यों में कर्मी

3. सामाजिक और सांस्कृतिक कार्यों में अन्तर।

4. परिवार के मनोरंजन सम्बंधी कार्यों में परिवर्तन।

5. स्नेह व प्रेम के लिए परिवार पर निर्भरता का बढ़ना।

अभ्यास प्रश्न

1. परिवार से आप क्या समझते हैं? इनके प्रकार बताये।

2. विद्यालय जनसंख्या शिक्षा हेतु परिवार की आवश्यकता एवं महत्व को समझाइये।

3. परिवार को परिभाषित करते हुए इसके कार्यों में आ रहे परिवर्तन कोबताइये।

4. परिवार में हो रहे आधुनिक परिवर्तन पर संक्षिप्त लेख लिखे।

5. जनसंख्या शिक्षा पर परिवार के शैक्षिक प्रभाव का वर्णन करें।

UNIT-V :POPULATION RELATED POLICIESAND PROGRAMMES

- Population policy in relation to health environment education policies.
- Programmes related to employment social movement.
- Voluntary and InternationalAgencies, UNFPA, WHO, UNESCO, etc.

भारत में विश्व की 16 प्रतिशत जनसंख्या है। जबकि क्षेत्रफल की दृष्टि से विश्व के कुल क्षेत्र का 2.4 प्रतिशत है। देश में 1.7 करोड़ जनसंख्या की वृद्धि दशक में 2.2 हो जाती है। 1991 की जनगणना से स्पष्ट है कि 1971–81 प्रतिशत वृद्धि हुई थी, 1981–91 में 2.11 प्रतिशत हो गई है, किन्तु वृद्धि में यह कमी अत्यंत अल्प है। वर्तमान वृद्धि दर 2.05 प्रतिशत से अधिक है यदि वर्तमान दर पर जनसंख्या वृद्धि होती रही तो इस दशक के पश्चात् देश की अविश्वसनीय वृद्धि हो जायेगी।

जनसंख्या भारत में जनसंख्या वृद्धि की समस्या बनी हुई है। विकासशील देशों ने भारत से प्रेरणा प्राप्त करके इसी भांति के कार्यक्रम प्रारम्भ किये और इण्डोनेशिया, थाइलैण्ड तथा दक्षिणी कोरिया जैसे देशों में पर्याप्त सफलता मिली है। भारत में 1951 में जन्मदर 41.7 प्रति हजार थी, 1990 में 30.2 हो गयी। देश में स्वतंत्रता के पश्चात् जनसंख्या वृद्धि स्वास्थ्य सुविधाओं में सुधार तथा महामारियों पर नियंत्रण से मृत्युदर में कमी होने से हुई है। इस प्रकार पिछले तीन से भी अधिक दशकों से सरकार की नीति जनंसख्या वृद्धि को रोकने की रही है। देश में पहली बार 17 अप्रैल 76 में राष्ट्रीय जनंसख्या नीति घोषित की गई। इसके पश्चात् जनता सरकार द्वारा संशोधित जनसंख्या नीति घोषित की। इसके बाद छठीं पंचवर्षीय योजना में भी जनसंख्या नीति स्पष्ट की गई। इसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है।

राष्ट्रीय जनसंख्या नीति, 1976

भारत में 16 अप्रैल 1976 को इस मंत्रालय की अनुशंसा पर राष्ट्रीय नीति घोषित की गई। इसमें जन्म दर को वर्तमान 35 व्यक्ति प्रति हजार की वृद्धि दर को 25 व्यक्ति प्रति हजार करके 1984 तक वार्षिक वृद्धि को 2.2 प्रतिशत से 1.4 प्रतिशत तक करना था। इस नीति की प्रमुख बातें निम्नलिखित हैं–

1. विवाह की आयु में वृद्धि की गई। इसमें विवाह की न्यूनतम आयु लड़कों की 21 वर्ष तथा लड़कियों की 18 वर्ष निर्धारित की गयी। इसके लिए कानून भी आवश्यक माना गया तथा विवाह का अनिवार्य रूप से पंजीकरण भी उपयोगी समझा गया।

2. संसद एवं राज्य विधान सभाओं में अपने प्रतिनिधियों की संख्या निश्चित करने के लिए सन् 2001 तक 1971 की जनगणना को आधार माना गया। इसके परिणाम स्वरूप जिन राज्यों में कम जनसंख्या है, वहाँ किसी प्रकार की क्षति नहीं होगी।

3. राज्यों को 1971 की जनगणना के अनुसार अनुदान दिया जायेगा। यह केन्द्रीय सहायता 8 प्रतिशत उन राज्यों के लिए सुरक्षित कर दियाद्व जिसका परिवार नियोजन में अच्छा कार्य

होगा। अतएव जिन क्षेत्रों में जनसंख्या कम होगी, उन्हें केन्द्रीय सरकार की आर्थिक सहायता का अधिक लाभ प्राप्त होगा।

4. स्त्री शिक्षा का प्रजननता से सीधा सम्बंध है। अतः स्त्रियों को शिक्षित तथा शिक्षा के प्रचार द्वारा अनौपचारिक शिक्षा पर ध्यान दिया गया।

5. जनसंख्या शिक्षा को अधिक प्रधानता दी गई। प्राथमिक शिक्षा से लेकर विद्यलाय के उच्च स्तर तक जनसंख्या शिक्षण का ज्ञान कराया गया। इससे जनसंख्या वृद्धि को रोक में सहायता प्राप्त होगी।

6. परिवार नियोजन अपनाने वालों को प्रोत्साहन दिये गये। इसके अलावा राज्यों केन्द्र सरकार ने केन्द्रीय कर्मचारियों को अन्य सुविधाएं प्रदान की। को परिवार नियोजन नीति अपनाने की पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान की गई।

7. परिवार नियोजन के प्रचार–प्रसार के लिए अनेक माध्यमों को अपनाया गया। ग्रामीण क्षेत्रों में इसे लोकप्रिय बनाने हेतु अनेक माध्यमों का सहारा लिया गया।

8. देश की वैज्ञानिक संस्थाओं में प्रजनन, जीव विज्ञान एवं गर्भनिरोधक साधनों पर अनुसंधान कार्य को प्रोत्साहित करना।

9. केन्द्रीय सरकार द्वारा परिवार नियोजन की प्रगति की वार्षिक समीक्षा करना।

10. परिवार नियोजन से सम्बन्धित स्वयंसेवी संगठनों के लिए आदर्श कार्यक्रम का सूत्रपात करना जिससे इस कार्यक्रम को प्रोत्साहन प्राप्त हो सके।

11. परिवार नियोजन की सफलता के लिए स्वस्थ जनमत तैयार करना परिवार नियोजन में इस तरह इस नीति से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष उपायो पर पर्याप्त ध्यान दिया गया है तथा व्यापक दृष्टिकोण अपनाया गया।

1977 की जनंसख्या नीति

जून 1977 में जनता सरकार ने परिवार नियोजन कार्यक्रम का नाम 'परिवार कल्याण कार्यक्रम' रखा। 1977 में केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण नीति की घोषणा की गई। इसमें 1976 की नीति की सभी बाते सम्मिलित थी। इसके अलावा देश में नसबन्दी को कानून द्वारा अनिवार्य नहीं बनाया गया। अपनी इच्छा से नसबन्दी कराने पर निःशुल्क आपरेशन की सुविधा दी जायेगी, शादी की आयु में वृद्धि, स्त्रियों के शैक्षणिक स्तर में सुधार जनसंख्या मूल्यों एवं सीमित परिवार को प्रोत्साहन देना, कार्यक्रम में विभिन्न संगठनों जैसे महिला एवं युवा संगठनों, पंचायत, सहकारिता मजदूर संगठनों आदि को शामिल करना, संतति निग्रह, के उपायों को प्रोत्साहन देना। इसके अलावा जनसंख्या नीति सम्बंधी कुछ तथ्य इस प्रकार हैं–

1. ऐच्छिक वन्ध्यीकरण के लिए नगद भुगतान जारी करना।

2. राज्यों की योजनाओं के लिए 8 प्रतिशत केन्द्रीय सहायता परिवार कल्याण की सफलता के आधार पर देना।

3. राज्यों में केन्द्रीय साधनों का बँटवारा 2001 तक 1981 की जनगणना के आधार पर करना।

4. परिवार कल्याण के लिए प्राप्त राशि को आयकर से पूरी तरह मुक्त रखना।

5. परिवार कल्याण कार्यक्रम के लिए निःशुल्क सेवाएँ उपलब्ध कराना।

इस प्रकार जनता सरकार की जनसंख्या नीति में पर्याप्त शिथिलता के परिणाम स्वरूप जनसंख्या नियंत्रण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। अतः परिवार नियोजन के लक्ष्य को पूर्ण सफलता प्राप्त न होने से जन्म दर को कम करने के लक्ष्य को पूर्ण नहीं किया जा सका।

छठवीं पंचवर्षीय योजना (1980–85) की जनसंख्या नीति

जनवरी 1980 में कांग्रेस सरकार पुनः सत्ता में आई। पर छठवीं पंचवर्षीय योजना (1980–85) में सरकार ने पुनः ऐच्छिक किन्तु प्रभावपूर्ण परिवार नियोजन की नीति आरम्भ की अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए 1996 तक निम्नलिखित तथ्य रखे गये–

1. परिवार का औसत आकार 4रू2 बच्चों से घटकर 2.3 बच्चे हो जायेगे। 2. 1978 में जन्मदर 33 प्रति हजार से घटकर 21 प्रति हजार हो जायेगी।

3. मृत्युदर 14 से घटकर 9 और शिशु मृत्युदर 129 से घटकर 60 तक हो जायेगी।

4. वर्तमान 22 प्रतिशत प्रभावपूर्ण ढंग से सुरक्षित दम्पत्तियों का अनुपात 60 प्रतिशत हो जायेगा।

5. शताब्दी के अन्त तक देश की जनसंख्या 90 करोड़ तथा 2050 तक 120 करोड़ पर स्थिर हो जायेगी।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति के अनुसार 2000 ई. तक शुद्ध प्रजनन दर एक पर लाना देश का मुख्य दीर्घकालिक लक्ष्य है। इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए संसद द्वारा 1983 में अनुमोदित राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति में नीति सम्बंधी व्यापक ढाँचा प्रतिपादित किया है और स्वास्थ्य तथा परिवार नियोजन में विशेष सूचक के अन्तर्गत प्राप्त किये जाने वाले विशिष्ट लक्ष्यों को परिभाषित किया गया है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति में 2000 ई. तक के जनांकिकी लक्ष्य इस प्रकार है–

1. अशोधित जन्म दर –प्रति हजार 21

2. अशोधित मृत्यु दर –प्रति हजार 9

3. शिशु मृत्यु दर–जीवित जन्मों पर प्रति हजार 60 से कम

4. कारगर ढंग से सुरक्षित दम्पत्ति दर–60 प्रतिशत

5. जन्म के समय जीवन प्रत्याशा– 64 वर्ष

जनसंख्या नीतियों में स्वास्थ्य सेवाओं को बेहतर बनाने का प्रयास

अपने स्वास्थ्य सेवाओं की समस्त जिम्मेदारी सरकार की होती है। देशवासियों को स्वास्थ्य बनाये रखने, बिमारियों के रोकथाम हेतु प्रतिवर्ष भारत सरकार कई उपायो को अपनाती हैं। हमारे देश के संविधान ने भी स्वास्थ्य विषय को उपयोगी मानते हुए इसे राज्य सूची में जगह दी है। प्रमुख संक्रामक और गैर संक्रामक रोगों के नियंत्रण तथा उन्मूलन, व्यापक नीति निर्धारण, अन्तर्राष्ट्रीय स्वास्थ्य चिकित्सा और अर्द्ध–चिकित्सा शिक्षा तथा उसके नियमन की व्यवस्था, औषधियों पर नियंत्रण तथा खाद्य पदार्थों में मिलावट की रोकथाम जैसे कार्यों में केन्द्र का भी हस्तक्षेप रहता है। इसके अलावा जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण, सुरक्षित मातृत्व, शिशु रक्षण और टीकाकरण कार्यक्रमों में भी केन्द्र राज्य सरकारों को सहयोग देता है।

वर्ष 1951 में शिशु मृत्यु दर प्रति 1000 जीवन शिशु प्रसवों में 148 थी और 1999 में 70 रह गयी। सन् 1951 में पुरुषों की औसतन आयु 37.1 और महिलाओं की 36.2 थी। 1999 में पुरुषों की औसत आयु बढ़कर 62.7 और महिलाओं की 65.27 हो गयी। गिनीवर्म से होने वाले रोगों पर पूरी तरह काबू पा लिया गया है और 1996 के बाद से इन रोगों का कोई मामला नहीं आया। कुष्ठ रोग, पोलियो, नवजात शिशुओं के टिटनेस और आयोडीन की कमी से होने वाले रोगों को समूल नष्ट करने की दिशा में निरन्तर प्रगति हो रही है।

स्वास्थ्य, रक्षा एवं नियंत्रण हेतु केन्द्र सरकार निम्नलिखित प्रकार से प्रभावी भूमिका का निर्वहन कर रही है–

1. परिवार कल्याण कार्यक्रम : भारत में परिवार कल्याण कार्यक्रम की शुरुआत 1952 से शुरू किया गया था। परिवार कल्याण कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की आवश्यकता के मद्देनजर जनसंख्या के स्तर को स्थिर रखने के लिए जन्म–दर में कमी लाना है। देश के लोकतंत्रात्मक की भावना एवं परम्पराओं को ध्यान में रखते हुए, परिवार कल्याण कार्यक्रम में नियोजित औरउत्तरदायी अभिभावकत्व को प्रोत्साहन दिया गया। इसके लिए स्वैच्छिक और सूचना देने वाली ऐसी प्रक्रियाओं की मदद ली गयी जो व्यक्तिगत तौर पर स्वीकार की जा सके।

जनसंख्या को तीव्र गति से बढ़ने से रोकने के लिए या जनसंख्या को स्थिर रखने का सबसे महत्वपूर्ण उपाय बच्चों की मृत्यु दर, मातृत्व स्वास्थ्य मसले और जन्म निरोधक मसलों को साथ–साथ प्रभावित तौर पर देखा जाय। परिवार कल्याण कार्यक्रम की सफलता साक्षरता दर में सुधार, स्त्री शिक्षा और व्यक्ति तथा परिवारों के सामाजिक आर्थिक स्तर जैसे विभिन्न तत्वों पर निर्भर करती है। इस उपयोगी कार्यक्रम के तहत सरकारी स्वास्थ्य सुविधा के दायरे में प्रजनन और शिशु स्वास्थ्य सेवाएँ मुहैया करायी जा रही है।

2. राष्ट्रीय जनसंख्या नीति : सरकारी ने राष्ट्रीय जनसंख्या नीति 15 फरवरी 2000 को अनुमोदित की थी। इसे संसद के दोनों सदनों में वर्ष 2002 के बजट सत्र के दौरान स्वीकृति के लिए पटल पर रखा गया था। यह नीति सरकार की नागरिकों के लिए स्वैच्छिक और सूचना के विकल्प तथा उनकी मर्जी पर आधारित प्रजनन स्वास्थ्य सेवा और परिवार नियोजन सेवा के लक्ष्य मुक्त दृष्टिकोण की प्रतिबद्धता पर आधारित है। इस नीति के उद्देश्य हैं–

(क) गर्भ निरोधक उपयो की अभी तक पूरी नहीं हुई, आवयश्कता को पूरा करना, स्वास्थ्य के लिए बुनियादी ढाँचा, स्वास्थ्य कर्मचारी तथाप्राथमिक प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य देखभाल के लिए समेकित सेवा प्रदान करना।

(ख) कुल जनन क्षमता दरो को 2010 तक प्रतिस्थापन स्तर पर ले जाना, और

(स) वर्ष 2045 तक स्थिर आबादी का स्तर हासिल करना, ऐसा स्तर जो टिकाऊ आर्थिक वृद्धि, सामाजिक विकास तथा पर्यावरण संरक्षण की आवश्यकता के अनुरूप हो।

3. गर्भ निरोधक दवाओं की सामाजिक बिक्री : गर्भ निरोधक दवाओं की सामाजिक बिक्री का मूल उद्देश्य कम कीमत पर अच्छी और विश्वसनीय दवाओंको बाजार में उतारना जो आम लोग इसे खरीद सकें। गर्भ निरोधक की पुरानी मान्यताओं को खण्डित करने के लिए यह एक महत्वपूर्ण और आवश्यक कदम है। इसमें सरकारी, अर्द्धसरकारी, गैर–सरकारी संगठनों और निजी कम्पनियों के वितरण नेटवर्क के माध्मय से निरोध एवं महिलाओं के लिये खाने हेतु सस्ती इन दाम पर बेचना शामिल है। और अच्छी गर्भ निरोधक गोलियाँ कम गर्भ–निरोधक दवाइयों को आम आदमियों तक पहुंचाने के लिए भारत सरकार इन दवाओं पर 55 से 91 प्रतिशत तक सब्सिडी दे रही है।

4. जन्म नियंत्रण उपाय : भारत सरकार एवं राज्य सरकार समय–समय पर जन्म दर पर नियंत्रण के लिए कई उपयों को आजमाती है। नसबन्दी, गर्भनिरोधक दवा, निरोध, गर्भपात को कानूनी मान्यता देना कुछ मुख्य उपाय है। इसका असर जन्म दर पर नियंत्रण रखने पर पड़ा है। यह आँकड़ों से स्पष्ट हो जाता है। वर्ष 2000–2001 के दौरान देश में 45.9 लाख नसबन्दियाँ की गयी थी। इसी दौरान में आई.यू.डी. प्रवेशन की संख्या 60 लाख रही। इसके अलावा 151.7 लाख कण्डोम उपयोगकर्ता एवं 65.3 लाख गर्भनिरोधक गोलियाँ खाने वाले भी थे। एक अनुमान के मुताबिक 31 मार्च 2000 तक कुल 17.21 दम्पत्तियों में से 46. 2 प्रतिशत दम्पत्ति किसी न किसी मान्य परिवार नियोजन साधन द्वारा सुरक्षित थे। इस प्रकार इस कार्यक्रम की शुरुआत से अब तक 25 करोड़ 74 लाख 30 हजार जन्मों पर रोक लगाने में कामयाबी मिली है। भारत सरकार निरोध एवं गर्भ निरोधक दवाओं को राशन की दुकानों सार्वजनिक क्षेत्रों में मुफ्त एवं न्यूनतम मूल्य पर उपलब्ध कराया है जो सामाजिक क्रान्ति के साथ नया मील का पत्थर शामिल हुआ।

5. लिंग परीक्षण पर रोक : अजन्में एवं गर्भ में पल रहे बच्चे का लिंग जानने की कोशिश करना ही लिंग परीक्षण कहलाता है। पुरातन मान्यताओं के अनुसार एवं दहेज प्रथा के कारण कन्या का जन्म अभिशाप माना गया है। लिंग परीक्षण कर कन्याओं को गर्भ में ही मार दिया जाता है। इससे देश में कन्याओं की संख्या में कफी कमी देखी गई है। लिंग परीक्षण को रोकने के लिए भारत सरकार ने प्रसव पूर्व जांच तकनीक कानून, 1994 को 1 जनवरी 1996 सेदेशभर में लागू कर दिया गया है। भ्रूण के लिंग की जानकारी देने या परीक्षण करने पर कानूनी रोक है। अगर कोई अस्पताल या डाक्टर ऐसा करता पाया गया तो उनका लाइसेंस रद्द करनेद्व प्रैक्टिस पर रोक के साथ–साथ सजा का भी प्रावधान है। इस प्रसव–पूर्व जांच तकनीक अधिनियम के तहत सभी राज्योंध्केन्द्रों शासित प्रदेशों में युक्तियुक्त प्राधिकरणों और सलाहकार समितियों की स्थापना एवं गठन किया गया है। जो कन्या भ्रूण हत्या की सामाजिक बुराई को मिटाने के उद्देश्य से बनाया गया है जो जन्म से पहले बच्चे के लिंग का पता लगाने के लिए अक्सर किया जाता है। इस तकनीक का

प्रयोग आनुवंशिकी परामर्श केवल कानून के अन्तर्गत पंजीकृत जेनेटिक क्लीनिकद्व प्रयोगशालाएँ और परामर्श केन्द्र ही कर सकते हैं।

6. जनसंख्या अनुसंधान केन्द्रों द्वारा अनुसंधान औरमूल्यांकन : केन्द्रीय स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय ने राष्ट्रीय क्षेत्र दिल्ली सहित देश के 17 राज्यों में 18 जनसंख्या अनुसंधान केन्द्रों का जाल बिछा रखा है। ये केन्द्र विभिन्न विश्वविद्यालयों (12) तथा राष्ट्रीय स्तर के छह अन्य संस्थानों में खोले गये हैं। इन केन्द्रों में जनसंख्या पर रोक लगाने, जनासाख्यिकीय और सामाजिक जनसांख्यिकीय, सर्वेक्षण और जनसंख्या तथा परिवार कल्याण कार्यक्रमों के संचार सम्बंधी पहलुओं पर अनुसंधान कार्य होता है। सभी केन्द्र स्वायत्तशाही रूप में अपना कामकाज करते हैं। केन्द्र सरकार इन्हें अनुदान के रूप में सलाना आधार पर शत्–प्रतिशत वित्तीय सहायता उपलब्ध कराती है। 2000–2001 में इन केन्द्रों ने 151 अनुसंधान कार्य पूरे किये हैं।

7. गर्भपात को कानूनी मान्यता देना : भारत में गर्भपात के कई असुरक्षित तरीके प्रयोग में लाये जाते है जिसके कारण प्रतिवर्ष लाखों महिलाओं की असमय मृत्यु हो जाती है। महिलाओं को इस तरह की जानलेवा जोखिमों से बचाने के लिए गर्भपात को कानूनी मान्यता देनी पड़ी। यह कानूनी गर्भपात विवाहित महिलाओं पर आपसी सहमती से ही सम्भव है। महिलाओं को स्वास्थ्य सम्बंधी जोखिमों से बचाने के लिए गर्भ की चिकित्सीय समाप्ति अधिनियम को 1971 में लागू किया गया है। इस अधिनियम के अनुसार गर्भवती महिलाएँ 20 हफ्ते कीगर्भावस्था तक गर्भपात कर सकती है। वर्तमान में देश में 9528 मान्यता प्राप्तगर्भपात केन्द्र है। देश में प्रतिवर्ष छह लाख गर्भपात कराये जाते है।

8. राष्ट्रीय जनसंख्या आयोग : जनसंख्या वृद्धि दर को रोकने के लिए राष्ट्रीय जनसंख्या आयोग की स्थापना की गई। यह आयोग जनसंख्या की वर्तमान नीति के क्रियान्वयन का पर्यवेक्षण तथा समीक्षा करेगा। आयोग का प्रथम बैठक प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में 22 जुलाई 2000 को हुई थी। इस बैठक में सशक्त कार्यवाही समूह (ई.ए.जी.) के गठन की घोषणा की गयी थी। स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय के अन्तर्गत ई.ए.जी. का गठन उन जिले के लिए क्षेत्र विशेष परियोजनाएँ बनाने हेतु किया गया है, जो राष्ट्रीय परिवार कल्याण कार्यक्रम को लागू करने में पिछड़ रहे हैं। वर्ष 2001–02 में बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, उत्तरांचल और झारखण्ड को परिवार कल्याण महिला साक्षरता और पूर्ण टीकाकरण इत्यादि बहुखण्डीय पहल को लागू करने के लिए चुना गया। इससे इन राज्यों के सामाजिक जननांकीय आंकड़ों के सुधार में मदद मिलेगी।

प्रत्येक राज्य एवं केन्द्र शासित प्रदेश में राज्यध्केन्द्र शासित राज्य जनंसख्यायोग है। यह आयोग राष्ट्रीय आयोग के दृष्टांत पर आधारित है। उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश, हिमांचल प्रदेश, हरियाणा, असम, महाराष्ट्र, मेघालय, मिजोरम, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, लक्षद्वीप, जम्मू और कश्मीर, अरुणांचल प्रदेश, केरल, पंजाब, सिक्किम और अण्डमान निकोबार द्वीप समूह में राज्य जनंसख्या आयोग गठित किये गये है।

9. पल्स पोलियो अभियान : वर्ष 1995 में पूरक टीकाकरण गतिविधि को अपनाये जाने के बाद से पोलियो मलाइटिस के उन्मूलन में उल्लेखनीय प्रगति की गयी है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत जन्म से 5 वर्ष की उम्र के सभी बच्चों को छह हफ्ते के अन्तराल से पोलियो के टीके की बूँद मुँह से पिलायी जाती है। पल्स पोलियो टीकाकरण के प्रत्येक दौर में

करीब 10 करोड़ बच्चों को पोलियो की बूँद पिलायी गयी है। वर्ष 1994 में अनुमानित 40000 पोलियो के मामले वर्ष 2000 तक घटकर 265 रह गये है।

वर्ष 2001 में पोलियो ग्रस्त क्षेत्रों में कम प्रसारण के मौसम में पोलियो वैक्सीन की बूँदे पिलायी गयी थीद्व और वायरस के फैलाव को रोकने के लिए अतिरिक्त दौर आयोजित किये गये थे। बिहार, दिल्ली, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल राज्यों एवं महाराष्ट्र एवं कर्नाटक के कुछ हिस्से में समय से पहले दवा पिलाये जाने से वर्ष 2001 के दौरान बीमारी के निवारण के आसार है। सघन दौर चलाने से पोलियो के मामले लगातार घट रहे है, सन् 1998 में जहाँ 1934मामले सामने आये थे वहीं सन् 1999 में इनकी संख्या घटकर 1126 रह गयी और वर्ष 2000 में 265 तथा 18 अगस्त 2001 तक 43 मामले सामने आये है।

10. टीकाकरण कार्यक्रम : सार्वभौमिक टीकाकरण कार्यक्रम सन् 1985 में चरणबद्ध तरीके से प्रारम्भ किया गया था और इसे 1990 तक सभी जिलों तक पहुँचाना था। कार्यक्रम का उद्देश्य टीके से रोकी जा सकने वाली छह बीमारियों से बचाकर शिशुओं और बच्चों में एव प्रसव के दौरान बीमारी एवं मृत्यु की संख्या घटाना था।

टीकाकरण का प्रसार वर्ष 1985 में 1990 के बीच काफी तेजी से हुआ। इसके बाद भी 85 प्रतिशत से 100 प्रतिशत के बीच सभी एंटीजनों के लिए टीकाकरण लगातार चल रहा है। मूल्यांकन सर्वेक्षणों के अनुसार वर्ष 1990–2000 तथा 2000–2001 के बीच टीकाकरण के प्रसार में उल्लेखनीय तेजी आयी है। बी. सी. जी. के मामले में 11.6, अंक, डी.पी.टी. –3 के मामले में 25.3 अंक, ओ. पी. वी. मामले में 17.9 अंक एवं खसरे के टीके के मामले में 14 अंक बढोत्तरी दर्ज की गयी है। जन्म के पहले वर्ष के भीतर की पूरी तरह टीकाकृत बच्चों की संख्या 37.8 प्रतिशत से बढ़कर 53 प्रतिशत हो गयी है। इसके बावजूद आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक एवं मणिपुर आदि में यह दर घट रही है। बिहार एवं उत्तर प्रदेश में सभी तरह के टीकों का प्रसार लगातार घट रहा है।

सामान्य टीकाकरण कार्यक्रम में सुधार के लिए आई.डी.ए. समर्थितपरियोजना 31 जनवरी 2001 को शुरू की गयी थी और इसे देश में तीन वर्ष की अवधि में लागू किया जाना है। परियोजना की कुल लागत 1118 करोड़ रुपये है, जिसमें आई.डी.ए. द्वारा दिया गया 709.9 करोड़ रुपये का ऋण भी शामिल है।

इस परियोजना के मुख्य अंक है–

1. पोलियो उन्मूलन गतिविधियों

2. सामान्य टीकाकरण सेवाओं को मजबूत बनाना, और

3. कार्यक्रम के लिए मध्यम अवधि का खाका बनाना।

11. प्रजनन तथा बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम : प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम पूरे देश में चल रहा है। यह कार्यक्रम 15 अक्टूबर, 1997 से शुरू किया गया है। हालांकि जिलो को आधार बनाकर शुरू किया गया है लेकिन इसे लागू करने की उनकी क्षमता के अनुरूप इसके अन्तर्गत क्षेत्र विशेष आवश्यकताओं के हिसाब से अलग–अलग उपादानों का आवंटन किया जा रहा है। जिलों को उनकी अशोधित जन्मदर तथा महिला साक्षरता दर के आधार

पर ए (58), बी (184) तथा सी (263) श्रेणियों में बाँटा गया है। इन देश से जिले का प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य का स्तर स्वयं स्पष्ट हो जाता है।

इस कार्यक्रम की पिछले वर्ष समीक्षा की गयी थी। विश्व बैंक की सहायता से टीकाकरण सेवाओं को पुख्ता बनाने के लिए एक परियोजना शुरू करके सामान्य टीकाकरण एवं पी.पी. आई. को सुदृढ़ बनाने के प्रयास किये गये थे। कार्यक्रम की कमियों को दूर करने के लिए चालू गतिविधियों की रफ्तार बढ़ाने के साथ ही वित्तीय आच्छादन, दाइयों के प्रशिक्षण, आर. सी. एच. शिविरों तथा आर.सी.एच. दूरदराज सेवाएं शुरू की गयी थी। राज्य एवं जिला स्तर की गतिविधियों एवं शहरी आर. सी. एच. अंश के लिए विशेष तौर पर ई.सी. समार्थित क्षेत्रीय निवेश कार्यक्रम के क्रियान्वयन में तेजी लायी गयी थी।

परिवार कल्याण कार्यक्रम

भारत तथा अन्य अविकसित देशों में जनसंख्या वृद्धि में तीव्रता द्वितीयविश्व युद्ध की अवधि के पश्चात् हुई है। आर्थिक विकास की दृष्टि से महत्वपूर्ण उपलब्धि की भाँति जनसंख्या में वृद्धि हुई है। विकसित देशों में तीव्र जनसंख्या वृद्धि मुख्य समस्या है तथा वर्तमान वर्षों में यह और अधिक हो गयी है। विश्व के अनेक विकासशील देशों में जिनमें भारत भी सम्मिलित है, जनसंख्या वृद्धि कोनियंत्रित करने हेतु परिवार नियोजन कार्यक्रम को विकास योजना में महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है तथा जनसंख्या वृद्धि दर कम करने के लिए अपनाया गया है। यद्यपि भारत में परिवार नियोजन कार्यक्रम सम्बंधी साहित्य पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। स्वाकारकर्ताओं के अपनाने वालो के प्रतिरूप का विशेष अध्ययन, परिवा नियोजन कार्यक्रम की क्षेत्रीय नीति के विकास की आवश्यकता का अभाव है। परिवार नियोजन के अभ्यास को अपनाना तथा आर्थिक, सामाजिक सुधार तथा विकास का स्तर जैसे प्रति व्यक्ति आयद्व नगरीकरण, साक्षरता, गैर कृषि कार्यशील, स्त्री कार्यशीलता तथा साक्षरता तथा स्त्रियों में साक्षरता के मध्य समझने के लियेपर्याप्त नहीं है।

भारत में परिवार कल्याण कार्यक्रम

परिवार नियोजन कार्यक्रम का मुख्य लक्ष्य न केवल मनुष्य की संख्या को कम, अधिक या स्थिर रखना होता है बल्कि बढ़ती हुई जनसंख्या के बड़े भाग के लोगों की जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि का प्रयास करना होता है। भारत में परिवार कल्याण कार्यक्रम का उद्देश्य जनसंख्या वृद्धि की वर्तमान वार्षिक वृद्धि दर 2.4 से 1.7 तक तथा शताब्दी के अंत में 10 प्रक्षेपित है। इसी भांति 1971 में जन्म दर 39 से कम होकर 1983–84 में 30 प्रति हजार प्रक्षेपित थी। यद्यपि भारत में जनसंख्या नीति के अन्तर्गत 1951 में परिवार नियोजन कार्यक्रम अपनाया गया था। 1951 तथा 1961 में जन्म नियंत्रण उपायो हेतु योजना का प्रारम्भ हुआ किन्तु इस दौरान अधिक प्रगति नहीं हुई है। यह कार्यक्रम पूर्णतः स्वैच्छिक था। 1961 की जनगणना के परिणाम प्रकाशित होने के बाद जिनसे उच्च जनसंख्या वृद्धि दर ज्ञात होती है, इस कार्यक्रम को और अधिक तीव्र किया गया। तथा ग्रामीण क्षेत्रों में भी इस दिशा में हर संभव प्रयास करने पर जोर दिया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य चिकित्सालय स्थापना के महत्व की दृष्टि से तथा विस्तार हेतु परिवार नियोजन सूचना तथा व्यक्ति के लिए सम्भवतः निवास के समीप सेवाएं उपलब्ध करना था। इसके अलावा बन्ध्यीकरण तथा रूढीगत के अलावा नवीन विधि आई.यू.डी. से भी लोगों को परिचित कराया गया। 1966 में इस योजना के क्रियान्वयन में प्रशासकीय दृढ़ता आईतथा स्वास्थ्य एवं परिवारनियोजन

मंत्रालय ने परिवार नियोजन के लिए अलग विभाग की घोषणा कि पर चलाए गए। राष्ट्रीय जिसमें समन्वित रूप से अनेक कार्यक्रम राष्ट्रीय स्तर स्तर पर अनेक संगठनों पर व्यय तथा राज्यों में परिवार नियोजन ब्यूरो को दिशा विस्तार हेतु प्रदान की गई। भारत के विभिन्न जिलो में इस कार्यक्रम केसंगठनकर्ता नियुक्त किये गये।

दम्पत्तियों को शिक्षा एवं छोटे परिवार के आदर्श को अपनाने के लिए प्रेरणा देने हेतु विभिन्न माध्यमों का सहारा लिया गया जैसे रेडियो, फिल्म, नाटक, प्रदर्शनी, समाचार पत्र, विज्ञापन, बिलबोर्डस और दीवारों पर पेटिंग आदि। दम्पत्ति किसी भी पद्धति (जैसे वन्ध्यीकरण, आई.यू.डी., कन्डोम) को अपनाने हेतु स्वतंत्र थे थे जो उनकी आवश्यकतानुसार उचित प्रतीत होता था। वन्ध्यीकरण और आई.यू.डी. निवेशन मुफ्त उपलब्ध कराए गये और स्वीकारकर्ता एवं प्रेरणा देने वाले को क्षतिपूर्ति हेतु नकद राशि प्रदान की गई। कन्डोम और दूसरे रूढिगत साधन भी परिवार नियोजन केन्द्रों एवं चिकित्सालयों में मुफ्त उपलब्ध कराए गए। निरोधक गोलियों का प्रलचन 1967 में प्रायोगिक आधार पर हुआ।

चौथी पंचवर्षीय योजना (1961–74) तथा पाँचवी पंचवर्षीय योजना (1974–79) में इस योजना को अधिक प्राथमिकता प्रदान की गई। आई.यू.डी. तथा वन्ध्यीकरण को विशेष प्रोत्साइन प्रदान किया गया। नगरीय क्षेत्रों में प्रति 5000 व्यक्तियों में एक परिवार नियोजन केन्द्र प्रदान किया गया। ग्रामीण क्षेत्रों में परिवार नियोजन केन्द्र को प्रत्येक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र से संबंधित किया गया। प्रत्येक केन्द्र के अन्तर्गत 6000 से 12000 जनसंख्या थी। प्रत्येक परिवार नियोजन केन्द्र में सम्बन्धित कर्मचारियों को सुविधाएं प्रदान की गई।

इन संगठनों के अलावा चलित इकाईयों द्वारा भी सेवाएँ प्रदान की गई। ग्रामीण क्षेत्रों में परिवार नियोजन सेवाओं का दूरवर्ती क्षेत्रों में विस्तार किया गया। मार्च 1971 के अंत में 1913 नगरीय परिवार नियोजन केन्द्र थे, 5179 ग्रामीण परिवार नियोजन केन्द्र 31476 ग्रामीण परिवार नियोजन उपकेन्द्रद्व 431 चलित बन्ध्यीकरण ईकाई तथा 432 चलित आई.यू. सी.डी. इकाईयों परिवार थी। इसके अलावा यहाँ–वहाँ 8861 अन्य चिकित्सा संस्थाएँ परिवार नियोजन कार्य कर रही हैं। यद्यपि तकनीकि स्टाफ का अभाव सभी स्तर पर था। कुल आवश्यक तकनीकी स्टाफ का प्रतिशत नगरीय स्तर पर 830 तथा ग्रामीण स्तर पर 530 प्रतिशत था। अतएव ग्रामीण स्तर पर यह अभाव अधिक पेचीदा था जहाँ देश की लगभग 80 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है।

छठी योजना (1978–83) में परिवार नियोजन की और पर्याप्त ध्यान दिया गया। इस योजना में स्वास्थ्य, परिवार कल्याण तथा पोषण सेवाओं को एक में समन्वित किया गया। इस योजना के अन्तर्गत जन्मदर प्रति हजार 30 तक लाने का लक्ष्य रखा गया। इसके लिए अनेक प्रयास किये गये।

परिवार नियोजन के साधनों को स्वीकारकर्त्ताओं की दर जनानकीय, सामाजिक, आर्थिक और प्रशासकीय विभिन्नताओं के मध्य परस्पर सहसम्बंध के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि पुरुष एवं स्त्री वन्ध्यीकरण औरा पुरुष साक्षरता में मध्य परस्पर धनात्मक सह–सम्बंध है। आई.यू.डी. निवेशन ओर प्रति व्यक्ति आय में धनात्मक सह–सम्बंध है। रूढिगत साधनों के स्वीकारकर्त्ताओं और नगरीय जनसंख्या में धनात्मक सह–सम्बंध है। सभी परिवार नियोजन विधियों के स्वीकारकर्त्ताओं और मुस्लिम तथा ईसाई जनसंख्या में नकारात्मक सह–सम्बंध

है। संक्षिप्त में भारत के राज्यों में मुसलमान एवं ईसाई जनसंख्या के बढ़ने से परिवार नियोजन स्वीकारकर्त्ताओं की दर में कमी आती है।

परिवार नियोजन में असफलता के कारण

भारत में यद्यपि 1952 से परिवार नियोजन कार्यक्रम आरम्भ हुआ है तथा 40 वर्षों के पश्चात् भी जन्मदर अभी भी 33 प्रति हजार से कम न हो सकी तथा वार्षिक वृद्धि दर भी 2.2 प्रतिशत है। देश में परिवार नियोजन के पिछड़ने के अनेक कारण है। इनमें कुछ इस प्रकार हैं–

1. आर्थिक : आर्थिक सम्पन्नता, परिवार नियोजन के लिए तीव्र प्रेरक का काम करती है। अधिकांश सम्पन्न व्यक्ति शिक्षित भी होते हैं। इस कारण वे परिवार नियोजन के लाभों एवं विधियों से भी परिचित होते है इसके अलावा उन्हें अपने आर्थिक स्तर की अधिक चिंता रहती है। अपने उच्च जीवन स्तर को बनाये रखने के लिए वे कम बच्चे पैदा करते हैं, अधिक आयु में विवाह करते है। विश्व के विकसित देशों में प्रमुखता रू संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, जापान और पश्चिमी यूरोपीय देशों में जन्म दर में कमी का कारण उन देशों की आर्थिक सम्पन्नता है। इसके विपरीत गरीबी जनसंख्या वृद्धि की सबसे अधिक प्रेरक है। गरीब व्यक्ति को अशिक्षा के कारण परिवार नियोजन कार्यक्रम से भय रहता है। गरीबों में कुपोषण एवं रोगों के कारण शिशु मृत्युदर अधिक होती है। जिससेविवश हो जाने के भय से वे अधिक बच्चे पैदा करते हैं।

2. राजनैतिक : भारत में परिवार नियोजन कार्यक्रम में राजनैतिक कारणों से भी पर्याप्त समस्याएँ उत्पन्न होती है। देश में अनपढ़, पराणपंथी, रूढीवादी व्यक्ति जो देश में लगभग तीन–चौथाई है, नसबन्दी को नामर्द बनाने वाले एवं धर्मविरुद्ध समझते हैं। 1977 में चुनावों में कांग्रेस पार्टी की हार का कारण आपातकाल में सरकार द्वारा तेजी से चलाया गया नसबन्दी अधिनियम भी था। दोषपूर्ण प्रोत्साहन की नीति के कारण भी यह प्रभावित हुआ है।

3. धार्मिक : परिवार नियोजन में धार्मिक कारणों का पर्यावरण अभाव है। देश में विभिन्न धर्मावलम्बी है। मुस्लिम समाज में अभी भी अनेक परिवार नसबंदी आपरेशन अथवा गर्भपात को धर्म विरुद्ध मानते है और उसका विरोधमी किया जाता है। इससे मुसलमानों की जनसंख्या अन्य धर्मावलंबियों की तुलना में तेजी से बढ़ती है और इससे असंतुलन होता है। शिक्षा एवं जागृति के अभाव में अभी भी हमारे समाज में ऐसे व्यक्तियों की कमी नहीं है। जो पिछड़ेपन, अंधविश्वास, और रूढ़िवादिता से ग्रस्त है। ऐसे व्यक्ति परिवार नियोजन कार्य में वाधक सिद्ध होते हैं। भारत में साम्प्रदायिक भावना अधिक व्यापक एवं उग्र है। कट्टरपंथी हिन्दू भी परिवार नियोजन कार्यक्रम को सिद्धांत ठीक समझते हुए भी उसका विरोध करते हैं। इसाईयों में रोमन कैथोलिक सम्प्रदाय तो कृत्रिम उपायो पर आधारित परिवार नियोजन को पापपूर्ण मानता है और उनके धर्म प्रचारक इसके विरुद्ध है।

4. सामाजिक : भारत के लोगों की भाषा और सांस्कृतिक अस्मिताएँ स्वरूप में भिन्न–भिन्न है। भिन्न प्रकार के सामाजिक रीतिरिवाज तथा विश्वास बड़े परिवार को बढ़ावा देते हैं और वे परिवर्तन की उस प्रक्रिया में बाधक है जो गर्भ निरोधक के आधुनिक तरीकों को अपनाने

को बढ़ावा देते हैं। कम सेकम एक या दो लड़के होने की इच्छा तथा महिलाओं में विवाह की औसतन कमआयु परिवारों के बड़े आकार के लिए उत्तरदायी है।

देश में गरीब, रोगग्रस्तता, अशिक्षित एवं अन्य अनेक व्यक्ति परिवार नियोजन को नहीं अपना रहे हैं। जनसंख्या में गरीब, रोगी, अशिक्षित तथा प्रबुध व्यक्तियों का अनुपात बढ़ रहा है। और स्वस्थ्य, शिक्षित और अप्रबुध व्यक्तियों का अनुपात घट रहा है। देश के स्वास्थ्य से अनेक समस्याएँ उत्पन्न होने का भय है। इसके अतिरिक्त देश के विभिन्न राज्यों में और क्षेत्रों के बीच जनांकिकीय स्थितियों और सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक वातावरण में भी पर्याप्त विविधताएँ हैं, जिनके कारण जनसंख्या नियंत्रण कार्यक्रम एक अत्यधिक चुनौतीपूर्ण और कठिन कार्य बन गया है।

5. पारिवारिक : देश में चिकित्सा विज्ञान में नवीन खोजे के परिणाम स्वरूप मृत्युदर में निरन्तर कमी की प्रवृत्ति है, औसत आयु में वृद्धि हो रही है। देश में औसत आयु 23 वर्ष से बढ़कर 57 वर्ष हो गई है। परिवार नियोजन के चलते जन्म दर में कमी होगी और इस प्रकार समाज में बच्चों और युवा व्यक्तियों की तुलना में प्रौढ़ एवं वृद्ध व्यक्तियों के अनुपात में वृद्धि होगी। पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव से अब देश में परम्परागत संयुक्त परिवार की प्रथा टूट रही है, जो अपने सदस्यों को बेरोजगारी, बीमारी और वृद्धावस्था में सुरक्षा की गारन्टी देती थी। देश में वृद्धों की कोई व्यवस्था न होने से उनकी शारीरिक एवं मानसिक स्थिति दयनीय और तनावपूर्ण हो जाती है जिसका सम्पूर्ण समाज पर कुप्रभाव पड़ता है।

सामाजिक आन्दोलन एवं रोजगार कार्यक्रम

सामाजिक आन्दोलन का अर्थ एवं परिभाषा : किसी समाज में सामाजिक आन्दोलन तब पैदा होता है जब वहाँ के लोग वर्तमान स्थिति से असंतुष्ट हो और उसमें परिवर्तन लाना चाहते हो। कई बार सामाजिक आन्दोलन किसी परिवर्तन का विरोध करने के लिए भी आयोजित किये जाते हैं। सामाजिक आन्दोलन के पीछे कोई विचारधारा अवश्य होती है। किसी आन्दोलन का प्रारम्भ पहले, असंगठित रूप से होता है और धीरे–धीरे उनमें व्यवस्था व संगठन पैदा होजाता है। सामाजिक आन्दोलन के एक सामूहिक व्यवहार होने के कारण कॉन्ट, दुर्खीम, लीबा, टार्डे आदि की इसमें काफी रुचि रही है। सामाजिक आन्दोलन में प्रारम्भिक समाजशास्त्रियों की रूचि परिवर्तन के एक प्रयास के रूप में रही जबकि वर्तमान समाजशास्त्री सामाजिक आन्दोलन को परिर्वन उत्पन्न करने या उसे रोकने के प्रयास के रूप में देखते है। सामाजिक आन्दोलन को इसी अर्थ में परिभाषित करते हुए टर्नर एवं किलियन लिखते हैं, "एक सामाजिक आन्दोलन को एक समाज अथवा समूह जिसका कि वह एक भाग है, के अन्तर्गत कुछ निरन्तता से परिवर्तन उत्पन्न करने या एक परिवर्तन को रोकने के लिए सामूहिक व्यवहार के रूप में परिभाषित करते है।

हार्टन एवं दृष्ट भी सामाजिक आन्दोलन में इन्हीं बातों को दोहराते हुए लिखते हैं, ''सामाजिक आन्दोलन समाज अथवा उसके सदस्यों में परिवर्तन लानेअथवा उसका विरोध करने का सामहिक प्रयास है।'' थियोडोरसन लिखते हैं, ''सामाजिक आन्दोलन सामूहिक व्यवहार का एक महत्वपूर्ण स्वरूप है, जिसमें परिवर्तन लाने अथवा उसका विरोध करने में सहयोग देने के लिए लोगों की बड़ी संख्या में संगठित अथवा जागरूक किया जाता है।'' रोज के अनुसार, ''सामाजिक आन्दोलन सामाजिक लक्ष्य की प्राप्ति के लिए लोगों के एक बड़ी संख्या के एक औपचारिक संगठनक को कहते हैं जो अनेक व्यक्तियों के सामूहिक

प्रयास से प्रभुता सम्पन्न, संस्कृति, संकुलों, संस्थाओं अथवा एक समाज के विशिष्ट वर्गों को संशोधित अथवा स्थानान्तरित करता है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि सामाजिक आन्दोलन का उद्देश्य समाज अथवा संस्कृति में कोई आंशिक अथवा पूर्ण परिवर्तन लाना अथवा परिवर्तन का विरोध करना होता है। सामाजिक आन्दोलन में कई व्यक्ति अनौपचारिक रूप से सम्मिलित होते हैं, अतः यह एक सामाजिक क्रिया एवं सामूहिक प्रयास है। प्रत्येक सामाजिक आन्दोलन एक विशिष्ट परिस्थिति की देन होता है।

रोजगार हेतु सरकारी उपाय

प्रारम्भ की तीन पंचवर्षीय योजनाओं में रोजगार वृद्धि के लिए सरकार ने कोई प्रत्यक्ष कदम नहीं उठाये। द्वितीय तथा तृतीय योजनाओं में अनेक पूँजी – गहन उद्योगों का विकास किया गया। परिणामस्वरूप तृतीय योजना के अन्तर्गत बेरोजगारी की समस्या ने विकराल रूप धारण करना आरम्भ कर दिया। अंतः चतुर्थ व पाँचवी योजना में सरकार ने रोजगार वृद्धि हेतु ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों में अनेक रोजगार कार्यक्रम चलाये। परन्तु यह तरीके भी इन योजनाओं में उत्पन्न अतिरिक्त श्रम शक्ति को रोजगार दिलाने में असमर्थ रहे। छठी. योजना में सार्वजनिक क्षेत्र के साथ–साथ निजी एवं सहकारी क्षेत्र में रोजगार अवसर सृजन करने के प्रयास की बात कही गयी। इसके अतिरिक्त, एकीकृत ग्राम्य विकास योजना, डेरी विकास कार्यक्रम, मत्स्य व्यवसाय आदि के द्वारा स्वरोजगार के अवसर जुटाने की बात कही गयी।

सातवीं योजना में भी रोजगार उत्पन्न करने के लिए कृषि क्षेत्र के महत्व को स्वीकारा गया। परन्तु यह क्षेत्र सम्पूर्ण बेरोजगारी को दूर नहीं कर सकता है। अतः ग्रामीण विकास विशेष रूप से निर्माण कार्यों के रूप में ग्रामीण पूँजी निर्माण की बात कही गयी। आठवीं योजना में प्रति वर्ष 85 लाख व्यक्तियों को अतिरिक्त रोजगार के अवसर उपलब्ध कराये जाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। सरकार द्वारा रोजगार वृद्धि हेतु समय–समय पर जो उपाय अपनाये गये हैं, उन्हें हम अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से तीन भागों में बाँट सकते हैं– 1. सामान्य रोजगारद्ध 2. विशिष्ट रोजगार तथा 3. रोजगार की सेवा।

1. सामान्य रोजगार : इसके अन्तर्गत मजदूरी रोजगार तथा स्वरोजगार को शामिल किया जा सकता है। है। मजदूरी रोजगार में वृद्धि हेतु प्रमुख रूप से योजनाओं मे विनियोग वृद्धि अथवा उद्योगों में विशेष रूप से लघु एवं कुटीर उद्योगों में श्रम प्रधान विधियों का सहारा लिया गया। स्वरोजगार के लिए बेरोजगारी के अनेक प्रकार से सहायता की गयीय जैसे उनके लिए व्यवसाय सम्बंधी प्रशिक्षण की व्यवस्थ्का की गयी है, आधारिक संरचना का निर्माण किया गया हैद्ध कच्चे माल तथा विपणन सम्बंधी सुविधाओं की व्यवस्था की गयी है, वित्तीय सहायता के लिए संस्थागत प्रबन्ध आदि की व्यवस्था की गयी है।

2. विशिष्ट रोजगार : इसके अन्तर्गत सरकार द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में विशेष रूप से शिक्षित बेरोजगारी को दूर करने के उपाय शामिल किये जाते हैं। इनकी विवेचना हम नीचे कर रहे हैं।

क. ग्रामीण रोजगार सम्बंधी उपाय

सरकार ने ग्रामीण बेरोजगारी को दूर करने की दिशा में निम्नलिखित उपाय किये हैं।

1. राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम : विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में निर्धनता तथा बेरोजगारी को कम करना एक प्रमुख उद्देश्य रहा है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु विभिन्न योजनाओं में अनेक कार्यक्रम चलाये गये। इन कार्यक्रमों में प्रमुख थे ग्रामीण श्रम शक्ति कार्यक्रम ग्रामीण रोजगार के लिये पुरजोर योजना, अग्रगामी गहन ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम तथा काम के बदले अनाज योजनाद्य अक्टूबर 1980 में इन सब कार्यक्रमों के स्थान पर एक कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया जिसका नाम राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम है। इस कार्यक्रम का प्रमुख उद्देश्य लाभकारी रोजगारों के अवसरों में वृद्धि, स्थायी सामुदायिक सम्पत्तियों का निर्माण तथा ग्रामीण निर्धनों के आहार स्तरों में वृद्धि करना है। यह कार्यक्रम जिला ग्रामीण विकास एजेन्सियों द्वारा संचालित किया गया है। इसकी वित्त व्यवस्था केन्द्र तथा राज्य सरकारे 50रू50 के आधार पर बाँट लेती हैं। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत दी गयी सहायता में से 50 प्रतिशत भाग कृषि श्रमिकों, सीमान्त किसानों, सीमान्त श्रमिकों को तथा 50 प्रतिशत भाग ग्रामीण निर्धनों को प्रदान किया जाता है।

2. स्वरोजगार के लिए ग्रामीण युवा वर्ग के प्रशिक्षण की राष्ट्रीय योजना : ग्रामीण युवा वर्ग (18–35 वर्ष की आयु) की बेरोजगारी को कम करने के लिए अगस्त 1979 में ट्राइसेम योजना प्रारम्भ की गयी। इसमें उन परिवारों के लोगों को शामिल किया जाता है जिनकी वार्षिक आय 3500 रुपये से कम है। इसके अन्तर्गत ग्रामीण युवकों के लिए आवश्यक दक्षता व तकनीकी प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाती है ताकि बाद में वह स्वरोजगार में लग सके। एक योग्य परिवार में एक युवा को चुनकर कृषि, उद्योग, सेवा एवं व्यापार से सम्बन्धित प्रशिक्षणदिया जाता है। चुने हुये युवकों में कम से कम 50 प्रतिशत अनुसूचितजाति एवं जनजाति के होने चाहिये। कुल लाभार्थियों में 40 प्रतिशत महिलाएँ होनी चाहिये।

3. ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम :ग्रामीण निर्धनता के लिए 1983–84 से ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया। इस कार्यक्रम के प्रमुख दो उद्देश्य हैं– प्रथम ऐसे गरीब परिवार जिनके पास भूमि नहीं है के एक व्यक्ति को वर्ष में कम से कम 100 दिन रोजगार उपलब्ध कराना तथा द्वितीय, ग्रामीण क्षेत्रों में टिकाऊ परिस्थितयों जैसे सड़क, भवन, नहर आदि का निर्माण करना जिससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था का विकास तेजी से हो। 1985–86 में अनुसूचित जाति एवं जनजाति, तथा मुक्त हुए बन्धक मजदूरों के लिए जो आवास की योजना इस कार्यक्रम के अन्तर्गत बनायी गयी थी उसका नाम 1986–87 में इन्दिरा आवास योजना कर दिया गया तथा उसके लिए 124 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया। 1989 में ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम को जवाहर रोजगार योजना में मिला दिया गया।

4. एकीकृत ग्राम्य विकास कार्यक्रम चतुर्थ योजना में छोटे एवं सीमान्त :किसानों की आर्थिक दशा में सुधार के लिए छोटे किसानों के विकास की एजेंसी तथा सीमान्त किसान एवं कृषि श्रमिक एजेंसी योजनाएँ बनायी गयी थी इसके अतिरिक्त कुछ योजनाएँ प्रारम्भ की गयी थी। परन्तु इन सभी योजनाओं में दोहरापन था जिससे इनक लाभों की गणना में कठिनाई होती थी। अतः इन सभी योजनाओं को मिलाकर 1978–79 में एकीकृत ग्राम विकास कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया जिसे छटवीं पंचवर्षीय योजना (1980–85) में गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम के रूप में शामिल किया गया तथा सातवीं पंचवर्षीय योजना में भी जारी रखने का निश्चय किया गया। इस कार्यक्रम का प्रमुख उद्देश्य निर्धन ग्रामीण परिवारों की

आय को बढ़ाना है जिससे कि वह निर्धनता की रेखा के ऊपर उठ सके। इसके लिए उन्हें सम्पत्ति व अन्य संसाधन देकर उनके लिए रोजगार के अवसरों में वृद्धि की जाती है। 1997–98 में इसके अन्तर्गत 40000 समूह बनाये गयेतथा इनके 4.6 लाख सदस्य थे।

5. जवाहर रोजगार योजना : सरकार ने 1989 में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम तथा ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम को मिलाकर ग्रामीण विकास के लिए एक अधिक विस्तृत योजना बनायी जिसका नाम जवाहर रोजगार योजना रखा गया। यह दोनों योजनाएँ भूमिहीन तथा सीमान्त भूमिधारी किसानों को निर्माणी कार्यों में वृद्धि द्वारा रोजगार के अवसर उपलब्ध कराती थी। जवाहर रोजगार योजना का उद्देश्य इसके अतिरिक्त आर्थिक दृष्टि से उत्पादक तथा सामाजिक दृष्टि से उपयोगी साधन उपलब्ध कराकर एक बड़े भाग को रोजगार दिलाना है।

ख. शहरी रोजगार सम्बंधी उपाय

इस प्रकार के उपायों में प्रमुख रूप से शिक्षित बेरोजगारी को कम करना है। शिक्षित बेरोजगारी में तकनीकी शिक्षा प्राप्त, सामान्य शिक्षा प्राप्त तथा कोई अन्य प्रशिक्षण प्राप्त लोग आते हैं। देश में कुल समय के लिए छोड़कर तकनीकी बेरोजगारी की मात्रा बहुत अधिक नहीं रही है। क्योंकि इनकी पूर्ति नियंत्रित रही है तथा इस श्रेणी के अनेक लोग विकसित तथा अल्प–विकसित देशों में प्रवासित हो गये। सरकार ने पिछले वर्षों में स्वरोजगार के ऊपर विशेष बल दिया है।

शहरी बेरोजगारी दूर करने के लिए सरकर ने प्रमुख रूप से निम्न कदम उठाये हैं–

1. नेहरू रोजगार योजना :यह योजना 2 अक्टूबर 1989 को प्रारम्भ की गयी। इस योजना में निम्न तीन स्कीम शामिल हैं।

क. शहरी सूक्ष्य उद्यम योजना :यह योजना 15 जून, 1990 को ऐसे शहरी बेरोजगारों की जो कि गरीबी की रेखा से नीचे रह रहे हैं, लघु उद्यम स्थापित करने के लिए सहायता प्रदान करने के उद्देश्य से प्रारम्भ की गयी। इस योजना में ऐसे शहरों या नगरों को लिया जाता है। जिनकी जनसंख्या 1981 की जनगणना के आधार पर 10000 से अधिक नहीं है।

ख. शहरी दिहाड़ी रोजगार योजना : इस योजना का उद्देश्य एक लाख से कम जनसंख्या वाली सभी शहरी बस्तियों में गरीब व्यक्तियों के लिए मूल सुविधाओं की व्यवस्था करके दिहाड़ी रोजगार प्रदान करना है।

ग. शहरी आवास और आश्रम सुधार योजना : इस योजना का उद्देश्य 1 लाख से 20 लाख की जनसंख्या वाली शहरी बस्तियों के आश्रम उन्नयन के माध्यम से रोजगार प्रदान करना है। दिसम्बर 1996 तक शहरी सूक्ष्म उद्यम योजना के अन्तर्गत 8.68 लाख लाभार्थियों को प्रशिक्षित किया गया था। शहरी दिहाड़ी रोजगार योजना के अन्तर्गत 452 लाख श्रम दिवसी के दिहाड़ी रोजगार के अवसर उपलब्ध कराये गये।

2. स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना : 1 दिसम्बर 1997 को नेहरू रोजगार योजना, निर्धनों के लिए शहरी मूल सेवाएँ तथा प्रधानमंत्री की समन्वित शहरी गरीबी निवारण कार्यक्रम को मिलाकर स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना प्रारम्भ की गयी। इस योजना

का उद्देश्य शहरी बेरोजगारों या अर्द्ध–वेरोजगार निर्धनों को स्व–रोजगार या दिहाड़ी रोजगार प्रदान करना है। केन्द्र एवं राज्यों के मध्य कोषों का अनुपात इसमें 75रू25 का है। सन् 1997–98 में इस योजना में सरकार ने 99 करोड़ रुपये व्यय किये।

3. प्रधानमंत्री की रोजगार योजना : शिक्षित बेरोजगार नवयुवकों के लिए प्रधानमंत्री ने इस योजना की घोषणा 15 अगस्तद्व 1993 को की थी। इस योजना के अन्तर्गत आठवीं योजना की अवधि में सात लाख सूक्ष्म उद्यम स्थापित करके 10 लाख से अधिक ऐसे शहरी शिक्षित नवयुवकों को रोजगार प्रदान करने का लक्ष्य था, जिसकी आयु 18 से 35 वर्ष के मध्य थी। इसमें कमजोर वर्ग तथा महिलाओं को प्राथमिकता दी जायेगी। इस योजना के तहत एक व्यक्ति परियोजना की राशि 1 लाख रुपये रखी गयी है। यदि दो योग्य व्यक्ति साझे उद्यम खोलते हैं तो अधिकतम राशि दो लाख रुपये हो सकती है। बशर्ते उनमें से प्रत्येक का अंक परियोजना लागत में 1 लाख रुपये से अधिक की न हो। प्रत्येक उद्यमी को परियोजना लागत का 5 प्रतिशत भाग सीमान्त मुद्रा के रूपमें नकद देना होगा।

रोजगार सेवा

रोजगार सेवा का महत्व बेरोजगारी को दूर करने में गौण होता है। यह नये रोजगार से अवसर उत्पन्न नहीं करती है। इसके अन्तर्गत रोजगार कार्यालयोंकी स्थापना को शामिल किया गया है। यह कार्यालय रोजगार चाहने वालो का पंजीकरण, उनके नियोजन, व्यावसायिक मार्गदर्शन व्यवसाय सम्बंधी सूचना के बारे में कार्य करते हैं। रोजगार कार्यालयों की संख्या 1961 से 325 थी जो बढ़कर दिसम्बर 1998 में 860 हो गयी। इसके अतिरिक्त 85 विश्व विद्यालयों में रोजगार सूचना एवं मार्गदर्शन केन्द्र थे।

जनसंख्या नीति एवं अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएँ

जनसंख्या विस्फोट का अर्थ है जनसंख्या का सब मर्यादाओं को तोड़कर बढ़ जाना। अर्थात् जनसंख्या का मानवीय, प्राकृतिक एवं अन्य मानवोपयोगी स्रोतों की तुलना में अत्यधिक बढ़ जाना है। परिणाम जीवन की गुणवत्ता का हास फलतः विशेषज्ञों द्वारा यह मत प्रकट किया गया कि जनसंख्या का विकास उपलब्ध संसाधनों के अनुसार ही होना चाहिए। अतः जनसंख्या शिक्षा कार्यक्रम का प्रावधान न केवल एक जनसंख्या नियंत्रण प्रविधि के रूप में किया गया वरन् दूसरे प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ें व्यक्तिगत एवं समष्टिगत विकास के लक्ष्य की भी नियोजन की गई।

जनसंख्या शिक्षा के सम्बंध में अनेक अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठियाँ आयोजित की जाती है। इससे जनसंख्या के सम्बंध में जागृति तो विकसित होती है। कार्यकर्ताओं और प्रशासकों का पुनर्बोधन भी होता है। कई अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएँ भी जनसंख्या नीति पर अपने विचार रखने हुये समस्त देशों में से इस पर अंकुश लगाने को प्रोत्साहित भी करती है। इसके लिये यह संस्थाएँ फिल्म, टेप, स्लाइड आदि का उपयोग भी किया जाता है।

UNFPA (United Nation Fund for PopulationActivities)

जनसंख्या गतिविधियों की संयुक्त राष्ट्र निधि संयुक्त राष्ट्र के तत्वाधान में विकसित एवं विकसित एवं विकासशील देशों में जनसंख्या कार्यक्रम को क्रियान्वित करने के लिए एक

निधि को स्थापित किया गया जिसे जनसंख्या गतिविधियों की संयुक्त राष्ट्र निधि के रूप में जाना जाता है। इसे संक्षेप में न्छथ्च। कहते है। लगभग सभी विकासशील देशों में विभिन्न क्षेत्रों में यह कार्य है। आबादी और परिवार नियोजन के प्रति जागरुक इसका प्रमुख उद्देश्य है–

- आबादी और परिवार नियोजन की आवश्यकताओं की पूर्ति करने की क्षमता पैदा करना।
- विकासित और विकासशील राज्यों में आबादी की समस्याओं तथा उनका सामना करने के सम्भावित उपायो के प्रति जागरण उत्पन्न करना।
- जनसंख्या वृद्धि के सम्भावित समाधान तथा विकासशील देशों को उनके अनुरोध पर आबादी की समस्या से जूझने के लिए सहायता देना।
- विकासशील देशों को दी जाने वाली जनसंख्या सहायता की 25 प्रतिशत से अधिक राशि को इसी निधि के माध्यम से देना।

UNESCO

जनसंख्या शिक्षा के सम्बंध में यूनेस्को का बहुत अधिक सहयोग क्षेत्रों को जनसंख्या शिक्षा के यूनेस्को के क्षेत्रीय कार्यक्रमों के माध्यम से मिल रहा है इन क्षेत्रीय कार्यक्रमों की मोबाइल टीम उच्च स्तरीय प्रशासकोंद्व शिक्षकों और कार्यकर्ताओं को जनसंख्या के स्वरूप, लक्ष्यों और भूमिका के सम्बंध में प्रशिक्षित करते हैं। संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष भारत के साथ सहायता करती है। देश के जनसंख्या के प्रश्न पर विकास और जरूरी तकनीकों पर सहायता करती है और फण्ड को काफी नुकशान हो रहा है। जनंसख्या के क्षेत्र को देखे तो पता चलेगा कि भारत जैसे कई और भी विकसित देश है जो इस समस्या पर अपनी चिन्ता दिखा रहे हैं। यह बाते तो करते है लेकिन इस कार्य करने के लिए मूल्य नही देते। जनसंख्या के प्रश्न पर कानून बनाने वाले प्रश्नों पर संयुक्त राष्ट्र संघ ज्यादा संवेदनशील है, परन्तु वह देश की आजादी प्रसिद्धि से ज्यादा नहीं मानता। संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष का साल का बजट 17 अरब डॉलर है और 11.3 अरब डॉलर विकासशील देशों के लिए जाते हैं और 5.7 विकसित देशों के अब इस समय की स्थिति है कि विकासशील देशों ने अपने हकों का 8.9 अरब डॉलर दिया है और विकसित देशों का जितना रखा गया है उसका आधा दिया जाता है।

इसमें विचार करने योग्य बात यह है कि विकसित देशों के पास पैसो की कमी नहीं है, लेकिन जनसंख्या के लिए पैसा नहीं होता। इसका मतलब यह हैकि जर्मनी ने आबादी कोष में अपने हिस्से का पैदा देना से मना कर दिया। इसका यह अर्थ हुआ कि जर्मनी के एकीकरण से वह आर्थिक मुश्किलों में फंस गया है। वह पहले की तरह संयुक्त राष्ट्र को सहायता नहीं दे सकता। इससे यह पता चलता है कि संयुक्त राष्ट्र का पैसा किसी देश तभी जाता है जब उसके साथ उस देश की सरकार भी पैसे लगाने में सहायता करे।

सारांश

जनसंख्या नीति

1. राष्ट्रीय जनसंख्या नीति, 1976

2. राष्ट्रीय जनसंख्या नीति, 1977

3. छठवीं पंचवर्षीय योजना की जनसंख्या नीति

जनसंख्या नीति एवं स्वास्थ्य सेवाएँ

1. परिवार कल्याण कार्यक्रम

2. राष्ट्रीय जनसंख्या नीति

3. गर्भ निरोधक दवाओं की सामाजिक बिक्री

4. जन्म नियंत्रण उपाय

5. लिंग परीक्षण पर रोक

6. जनसंख्या अनुसंधान केन्द्रों द्वारा अनुसंधान और मूल्यांकन

7. गर्भपात को कानूनी मान्यता देना

8. राष्ट्रीय जनसंख्या आयोग

9. पल्स पोलियो अभियान

10. टीकाकारण कार्यक्रम

11. प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम

परिवार नियोजन में असफलता के कारण

1. आर्थिक, 2. राजनैतिक, 3. धार्मिक, 4. सामाजिक, 5 पारिवारिक।

रोजगार हेतु सरकारी उपाय

1. सामान्य रोजगार

2. विशिष्ट रोजगार

क. ग्रामीण रोजगार सम्बंधी उपाय

1. राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम

2. स्वरोजगार के लिए ग्रामीण युवा वर्ग के प्रशिक्षण की राष्ट्रीय योजना

3. ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम

4. एकीकृत ग्राम विकास कार्यक्रम

5. जवाहर रोजगार योजना

ख. शहरी रोजगार सम्बंधी उपाय

1. नेहरू रोजगार योजना

2. स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना

3. प्रधानमंत्री रोजगार योजना

4. रोजगार सेवा

अभ्यास प्रश्न

1. जनसंख्या नीति पर संक्षिप्त लेख लिखे।

2. जनसंख्या नीति पर स्वास्थ्य सेवाओं का क्या प्रभाव पड़ता है। स्पष्ट करें।

3. परिवार नियोजन से क्या तात्पय है? भारत में परिवार नियोजन पर्याप्त सफलता क्यों अर्जित न कर सका?

4. भारत सरकार द्वारा रोजगार बढ़ाने हेतु चलाये जा रहे कार्यक्रमों व्याख्या करें।

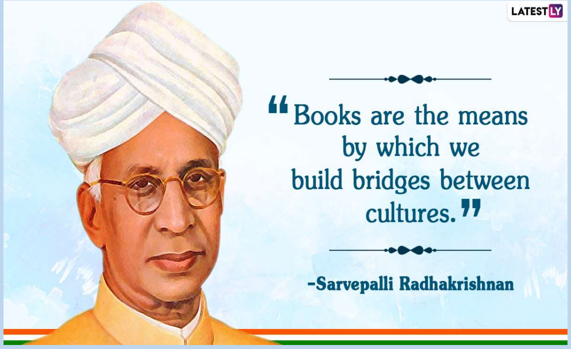

Center for Distance Learning & Continuing Education
MAHATMA GANDHI CHITRAKOOT GRAMODAYA VISHWAVIDYALAYA
Chitrakoot, Satna (M.P.) 485334
E-mail : directordistancemgcgv@gmail.com